स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–18, अंक–6, ज्येष्ठ–आषाढ़ 2067, जून, 2010

संपादक
विक्रम उपाध्याय

कार्यालय
धर्मक्षेत्र, सेक्टर-8, बाबू गेनू मार्ग
रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली-110022
से प्रकाशित
दूरभाष : 011-26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 से मुद्रित।

आवरण कथा-6

मनमोहन सिह की दूसरी पारी में सरकार पूरी तरह बिखरी नजर आती है। सत्ता की धुरी प्रधानमंत्री के न होने के कारण मंत्रियों में घोर अराजकता फैली हुई है।

कवर पेज

अनुक्रम

आवरण लेख
निराशा से भरा है यूपीए की दूसरी पारी का पहला साल
– स्वदेशी संवाद 6

प्रतिक्रिया
पश्चिम में गहराते आर्थिक संकट से बचे भारत
– डॉ. अश्विनी महाजन 9

समस्या
सुलगता पूर्वोत्तर
– बलवीर पुंज 11

दृष्टिकोण
कृषि, कर्ज और महंगाई की चुनौतियां
– भारत डोगरा 13

कृषि
हमारे किसान बदहाल क्यों?
– देविंदर शर्मा 16

लेख (स्वदेशी महिला मोर्चा)
भारतीय संस्कृति का आधुनिक महिला समाज
– डॉ. अनामिका पांडे 19

कूटनीति : भारत पर चीन का दबाव
– उमेश प्रसाद सिंह 21

विचार–विमर्श : सबसे बड़ा रुपैया
– लक्ष्मीकांता चावला 23

मुद्दा : देश के वर्तमान हालात
– प्रभात झा 25

अर्थव्यवस्था
वैश्विक आर्थिक मंदी : भारतीय अर्थव्यवस्था पर इसका प्रभाव
– डॉ. करुणा शंकर कनौजिया 27

चिंतन : क्या लुप्त हो जाएगी गंगा
– निरंकार सिंह 29

पर्यावरण : जान का दुश्मन बना इलेक्ट्रॉनिक कचरा
– पंकज चतुर्वेदी 32

समाज : जरूरत है आम आदमी को जागरूक होना
– डॉ. दीपक श्रीवास्तव 34

पाठकनामा / 2, समाचार परिक्रमा / 4, आंदोलन / 36

पाठकनामा

राष्ट्रहित की पत्रिका है स्वदेशी पत्रिका

अप्रैल माह का अंक पढ़ा, बहुत अच्छा लगा। क्या फूट जायेगा चीनी बुलबुला, वन पशुओं की सुरक्षा भी जरूरी, कानून से परे नेता एवं जरूरत है छोटे राज्यों के निर्माण की, आदि लेखों ने काफी प्रभावित किया। स्वदेशी पत्रिका को नियमित पढ़ने से राष्ट्रहित में सोचने वालों की संख्या में काफी वृद्धि होगी। आज देश के स्वावलंबन के लिए कुछ करने की इच्छा रखने वाले पाठकों की बहुत आवश्यकता है। हम आशा करते हैं कि पत्रिका भारत के प्रत्येक गांव–गांव तक पहुंचे।

– राजेंद्र सिंह ठाकुर, जिला प्रमुख ग्राम भारती ग्वालियर

अब और ना बहाए जाए निर्दोष लोगों का खून

आज भारत के कई राज्यों में माओवादी पनप रहे हैं। जिसका नुकसान कोई नेता नहीं बल्कि आम आदमी भुगत रहा है। नक्सलवादी अब निर्दोष लोगों की जान ले रहे हैं। एक तरह से कहा जाए नक्सलवाद अपने लक्ष्य से भटक कर गलत राह पर चल रहा है। हमने सुना था कि नक्सलवाद जमीदारों और पूंजीपतियों के विरुद्ध चलाया गया एक अभियान के रूप में शुरू हुआ था, गांवों खासरक आदिवासी क्षेत्रों में रोजी रोटी न मिलने और विकास से दूर रहने के कारण लोगों में रोष उत्पन्न होने के कारण सशस्त्र आंदोलन की ओर कुछ लोग अग्रसर हुए। गरीबी और असामनता के कारण नक्सलवाद पैदा हुआ। केंद्र सरकार द्वारा विदेशपरस्त और अमीर परस्त नीतियों के पक्ष लेने के कारण प्राकृतिक संसाधानों पर निर्भर रहने वाले गरीब आदिवासी को अपनी ही भूमि से बेदखल होना पड़ा। यहां तक माओवादी आंदोलन को काफी हद तक जायज भी ठहाया जा सकता है। परंतु कुछ वर्षों से यह देखने में आ रहा है कि माओवादी हिंसा लूट मार और आम आदमी को अपना शिकार बनाने लगे हैं। अब नक्सलवाद गलत मार्ग पर चल रहा है। नक्सलवादी देश को खोखला कर रहे हैं। केंद्र में सरकार बेवश है। कितनी दुख की बात है एक तरफ तो हम दुनिया को शांति का पाठ पढ़ा रहे है वही दूसरी तरफ हमारे देश के ही कुछ लोग बेवजह हिंसा फैला रहे हैं। कहीं बस उड़ा रहे हैं तो कहीं रेलगाड़ी। यह हमारा दुर्भाग्य है कि जब देश के बाहर के दुश्मन हमारी सुरक्षा को गंभीर चुनौती दे रहे हैं उसी समय देश के भीतर से भी अशांति और हिसा की घटनाएं हो रही हैं। समय आ गया है हम अपनी राजनीतिक चिद्वेष को किनारे रखकर इस हिंसक माओवादी आंदोलन से निपटने की कोशिश करें – ताकि निर्दोष आम जनता का खून और न बहाए जाए।

– खुशयाल सिंह पडियार, ग्राम : क्वीली, पोस्ट लास्तू, घडियालधार, टिहरी गढ़वाल

केंद्र में बैठी सरकार कर रही है लगातार जनता को परेशान

पिछले काफी महीनों से आम जनता महंगाई की मार झेल रही है परंतु अब तक कोई भी जन आंदोलन उभर कर नहीं आया है। इससे साफ होता है कि भारत में निजी क्षेत्र में काम करने वाले लोग रुखा–सूखा खाकर गुजारा करना जानते हैं और उन्हें अपना रोजगार जाने का हर समय डर रहता है। जबकी सरकारी विभाग में काम करने वाले हड़ताल करके अपना वेतन बढ़ा लेते है। तभी तो अब तक कोई भी जन आंदोलन उभर कर रहीं आ रहा है। बढ़ती महंगाई की मार और बढ़ते पेट्रोल–डीजल के दाम आम आदमी का जीना दूभर कर रहे हैं। आज हमें गांधी के सिद्धांतों पर चलने का समय आ गया है। हम इस बढ़ती महंगाई की मार को गांधी जी जैसा सदा जीवन बिताकर कर सकते हैं।

– संदीप विश्वास, शाहदरा

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

''धर्मक्षेत्र'' शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

दूरभाष : 26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com

अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क *'स्वदेशी पत्रिका'* दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 100 रुपए

आजीवन सदस्यता शुल्कः 1,000 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

(ध्यानार्थ : कृपया अपना नाम व पता साफ अक्षरों में लिखें)

उन्होंने कहा

तेल के दामों में बढ़ोतरी होती है तो इसका जवाब देश की जनता देगी।

– नितिन गडकरी, भाजपा अध्यक्ष

भोपाल गैस मामले में न्याय में विलंब हुआ है और व्यावहारिक तौर पर न्याय नहीं दिया गया। मैं तो यह कहूंगा कि न्याय को दफना दिया गया है।

– वीरप्पा मोइली, केंद्रीय कानून मंत्री

बीसीसीआई पैसे के पीछे भागती है। इसलिए एशियन गेम्स प्राइज मनी है इसलिए टीम नहीं भेज रही है।

– सुरेश कलमाड़ी, अध्यक्ष, आईओए

– 0 –

मैंने अपनों को खोया है। क्या मेरे अपनों की जान की कीमत बस इतनी है कि उनके हत्यारों को दो साल की सजा दी जाए।

– शांतिदेवी, भोपाल गैस पीड़ित

यह इंसाफ नहीं इंसाफ के नाम पर मजाक है, जो हमसे किया जा रहा है।

– रईसा बी, भोपाल गैस पीड़ित

संपादकीय

हमारी और उनकी प्राथमिकताएं

सरकार की प्राथमिकता क्या होनी चाहिए। जनता के लिए जीवन को सरल बनाना। देश की आंतरिक और वाह्य सुरक्षा को सुनिश्चित करते हुए निरंतर विकास प्राप्त करना। सरकार के कामकाज को पारदर्शी बनाए रखना और जनता के विश्वास पर खरे उतरना। क्या मनमोहन सिंह की सरकर इन प्राथमिकताओं पर खरी उतर रही है। यूपीए सरकार की दूसरी पारी जितनी उत्साह से शुरू हुई थी, एक साल बीतते बीतते उतनी ही निराशा में डूब गई है। ऐसा लगता ही नहीं कि यह सरकार देश के प्रति कोई जिम्मेदारी निभा रही है। केबिनेट मंत्रियों से लेकर प्रधानमंत्री तक कहीं नहीं लगता कि कोई यश प्राप्ति के लिए काम कर रहा है। सरकार विभिन्न दिशाओं में अलग अलग महत्वकांक्षा के साथ भागती नजर आ रही है। कृषि मंत्री प्राथमिकता खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के बजाय। आयात पर निर्भर रहना है। लोगों को राहत देने के बजाए खुद के लिए राहत बटोरने में लगे हैं। कभी उनका नाम दूध के दाम बढ़ाने के लिए बाजार को उकसाने में आता है तो कभी चीनी की काला बाजारी में। कभी कृषि मंत्री आईपीएल के विवाद में डूबे नजर आते हैं तो कभी विदेशी कंपनियों की तरफदारी में। शासन चलाने का उनका वृहत्तर अनुभव जन समस्याओं को दूर करने में कहीं आता ही नहीं। कृषि मंत्री के रूप में उनका छह साल का कार्यकाल सिर्फ विवादों और जनसमस्याओं को बढ़ाने के लिए जाना जाएगा।

प्रधानमंत्री हो या यूपीए की अध्यक्ष दोनों में से किसी को भी अभी तक नहीं लगा कि महंगाई और खाद्यान्न संकट के इस काल में किसी ऐसे व्यक्ति को कृषि मंत्रालय का दायित्व दिया जाए जो किसानों और गरीबों से लगाव रखता हो, और उनके दर्द से वह व्यथित महसूस करता हो। अकेले कृषि मंत्रालय पर ही दोष क्यों? जनता को चार चार आसूं रूलाने वाले और भी तो मंत्रालय हैं। पेट्रोलियम मंत्रालय कहां कम है। ठीक बजट से पहले पेट्रोलियम पदार्थों के दाम बढ़ाने के बाद अब फिर से डीजल और पेट्रोल की कीमतें बढ़ाने की तैयारी चल रही है। कहा जा रहा है कि सार्वजनिक क्षेत्र की पेट्रोलियम कंपनियां अपने घाटे को पाटने के लिए कीमत बढ़ाने का दबाव डाल रही हैं।

प्रधानमंत्री स्वयं पिछली बार यह संकेत दे चुके हैं। वह यह भी कह चुके हैं कि दिसंबर से पहले महंगाई कम होने के कोई आसार नहीं है। ठीक ही तो है। जब हर दूसरे तीसरे महीने डीजल और पेट्रोल के दाम बढ़ेंगे तो फिर कहां महंगाई कम होगी। यह स्थिति तब है जब यह माना जा रहा है यूरोप में आए नए आर्थिक संकट और अमरीकी अर्थव्यवस्था को उबरने में और समय लगने के कारण अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पेट्रोलियम पदार्थों की खपत कम ही रहेगी। इस समय सिर्फ चीन और भारत ही ऐसे दो देश हैं जहां पेट्रोलियम पदार्थों की खपत बढ़ रही है।

रेल मंत्रालय और नागरिक उड्डयन मंत्रालय के क्या कहने। इन दोनों मंत्रालयों के प्रभारी केबिनेट मंत्रियों की प्राथमिकता अपने मंत्रालय से कहीं अधिक अन्य कामों में हैं। रेल मंत्राणी के लिए उनका विभाग सिर्फ उनके लिए राजनीतिक सुविधा है। उनकी प्राथमिकता बंगाल में अपनी सरकार बनाने की है न कि रेल व्यवस्था सुधारने की। इसलिए आए दिन रेल दुर्घटना होती है पर मंत्राणी महोदया इसे तव्वजों नहीं देती। उड्डयन मंत्री अपनी निजी सुविधाओं और अपनी कमाई की सेहत देखना ज्यादा महत्वपूर्ण समझते हैं, न कि अपने विभाग की हालात ठीक करना। एयर इंडिया न सिर्फ व्यवसाय के मामले में फिसड्डी हो चुका है, बल्कि उसकी विश्वसनीयता पर भी घोर संकट है। आए दिन हड़ताल और बेलगाम अधिकारियों की हड़कतों से विभाग को शर्मसार होना पड़ रहा है। सबसे अधिक बेचारगी की हालत गृहमंत्रालय की है। मंत्री महोदय समस्याओं को हल करने के बजाए बंगले झांकने रह जा रहे हैं। नक्सल की समस्या ने उनकी कार्यकुशलता पर गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं।

हालात यह है कि आंतरिक सुरक्षा का मामला होने के बावजूद विषय रक्षा मंत्रालय पर ज्यादा निर्भर हो गया है। गृहमंत्री एक दिन निर्णायक लड़ाई की बात करते हैं तो दूसरे दिन अपनी कमियां और कमजोरियां गिनाने लगते हैं। कहा तो यह जा रहा है कि वह किसी तरह से इस विभाग से पल्ला छुड़ाने की जुगत में लगे हैं। कहां है सरकार कहां है उसकी प्राथमिकताएं। सरकार मनमोहन भरोसे है या राम भरोसे कहना बड़ा मुश्किल है।

नहीं मिला इंसाफ भोपाल गैस पीड़ितों को

भोपाल गैस पीड़ितों को 25 साल की लंबी कानूनी लड़ाई के बाद भी कुछ हासिल नहीं हुआ। बल्कि अदालत ने दोषियों को दो साल की कैद और 13 लाख 15 हजार 75 रुपए जुर्माने की सजा सुनाई। भारतीय इतिहास में 7 जून 2010 का यह दिन सबसे बड़ा काला दिन रहा। जब भारतीय राजनेताओं और अदालतों ने यूनियन कार्बाइड जैसी अमरीकी कंपनी के आगे अपने घुटने टेक दिए।

चाय भी ग्लोबल वार्मिंग की शिकार

क्या जलवायु परिवर्तन का असर चाय की गुणवत्ता और उत्पादन पर भी पड़ रहा है? तोकलाई एक्सपेरिमेंटल स्टेशन (असम) इसके लिए एक अध्ययन करा रहा है। चाय पर शोध करने वाला यह संस्थान दुनिया में अपनी तरह का पहला संस्थान है। संस्थान ने पिछले 90 वर्ष के आंकड़े एकत्रित किए हैं जिससे बदलते रुख का संकेत मिल रहा है। संस्थान के उत्पादन विभाग के प्रमुख आरएम भगत के अनुसार हमने इलाके की जलवायु में कुछ परिवर्तन देखे हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण बारिश में लगभग 200 मिमी की कमी आई है। इस परिवर्तन के कारण चाय की गुणवत्ता पर भी इसका असर पड़ा है।

भारतीय कंपनियों ने चीन में किए नए निवेश के करार

इंफोसिस और विप्रो जैसी कुछ प्रमुख भारतीय कंपनियों ने चीन में कुछ नई परियोजनाओं में निवेश के करार किए हैं। राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल की शंघाई यात्रा के दौरान दोनों देशों के उद्योग जगत के दिग्गजों की बैठक में समझौते पर दस्तखत किए गए। विप्रो ने चीन के चांगझाऊ में हाइड्रोलिक सिलेंडर विनिर्माण कारखाना लगाने का समझौता किया। और दूसरी तरफ इंफोसिसि ने जिआक्सिंग में शिक्षण केंद्र की स्थापना करेगी।

कृषि क्षेत्र में हुई कम वृद्धि

सूखे के कारण देश के कृषि क्षेत्र की वृद्धि दर वित्त वर्ष 2009–10 में 0.2 प्रतिशत की रही है जो पिछले पांच साल में वृद्धि दर का सबसे कम आंकड़ा है। वित्त वर्ष 2008–09 में कृषि एवं सहायक क्षेत्रों की वृद्धि दर 1.6 प्रतिशत रही थी। कृषि क्षेत्र की वृद्धि दर बेशक कम रही हो लेकिन केंद्रीय सांख्यिकी संगठन (सीएसओ) के पहले के अनुमान के मुकाबले यह थोड़ा बहुत अधिक रही है।

लखटकिया कार को अंतरराष्ट्रीय सम्मान

बीते साल जबरदस्त सुर्खियां बटोरने वाली टाटा की नैनो कार को अंतरराष्ट्रीय सम्मान मिला है। परिवहन श्रेणी के अंतर्गत सबसे बढ़िया नए उत्पाद खंड में टाटा मोटर्स की इस लखटकिया कार को वर्ष 2010 के एडिसन अवार्ड्स में स्वर्ण पदक दिया गया है। अमेरिका का यह प्रतिष्ठित पुरस्कार महान वैज्ञानिक थामस अल्वा एडिसन की याद में दिया जाता है।

सहयोगी देशों को लामबंद करेगा भारत

भारत ने संकेत दिया है कि हाल–फिलहाल दोहा वार्ता के पूरी होने के आसार नदारद हैं। वजह वह खुद नहीं, विकसित देश हैं जो वार्ता के एजेंडे की मूल भावना के अनुकूल आगे नहीं बढ़ने की तरकीबें निकालने में ज्यादा ध्यान दे रहे हैं।

भारत इस दौर की वार्ता को पूरी कराने के लिए दुनिया के सहयोगी देशों को लामबंद करेगा। उद्योग चैंबर फिक्की की ओर से आयोजित सम्मेलन को संबोधित करते हुए वाणिज्य मंत्रालय में अपर सचिव डी.के. मित्तल के अनुसार अभी तक विकसित देशों का रवैया किसी भी मामले में साफ–सुथरा और दोहा दौर के विकासात्मक एजेंडे के अनुकूल नहीं रहा है। इसलिए हमें सहयोगी देशों के बीच सहमति बनाकर उन्हें डब्ल्यूटीओ के मंच पर लाना। इसके लिए भारत ने तैयारियां अभी से ही शुरू कर दी है।

तेंदुए का अस्तित्व भी खतरे में

देश में सिर्फ बाघ ही अपने अस्तित्व के लिए नहीं जूझ रहे हैं बल्कि तेंदुआ भी इसी मुश्किल का मार झेल रहा है। इस साल जनवरी से अब तक देश में 160 तेंदुए मारे जा चुके हैं जबकि पिछले साल 290 तेंदुओं को मार दिया गया था।

गैर सरकारी संगठन वाइल्ड लाइफ प्रोटेक्शन आफ इंडिया के आंकड़े यही जाहिर करते है। पिछले 12 सालों में 1994 से अब तक भारत में 3189 तेंदुए मारे गए हैं।

कितनी दुख की बात है जहां लोगों को पर्यावरण के हितों की रक्षा की बात कही जा रही है वहीं जंगल के जानवरों को मारा भी जा रहा है।

21 करोड़ लोग हो जाएंगे बेरोजगार

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) ने कहा है कि यूरोप में गहराते ऋण संकट के कारण वित्तीय बाजारों में आई अस्थिरता से इस वर्ष दुनिया में 21 करोड़ से ज्यादा लोग बेरोजगार हो जाएंगे जिससे बेरोजगारी की दर 6.5 प्रतिशत के स्तर तक पहुंच जाएगी। जिनेवा में वार्षिक बैठक में रिकवरी एंड ग्रोथ विथ डीसेंट वर्क नाम से जारी रिपोर्ट में यह आंकड़े पेश किए गए थे। रिपोर्ट में यूरो क्षेत्र के कर्ज संकट और इससे वैश्विक पूंजी बाजारों में आई हलचल से रोजगार क्षेत्र के प्रभावित होने का ब्यौरा दिया गया।

नहीं थम रहा छंटनी का दौर

अमेरिकी अर्थव्यवस्था में मंदी का दौर खत्म होने का नाम नहीं ले रहा है जिसके कारण सभी देशों की अर्थव्यवस्था में मंदी का संकट बरकरार है। आज अमेरिकी अर्थव्यवस्था में बेशक सुधार हो रहा है पर इससे अपने कर्मचारियों को बाहर का रास्ता दिखाने वाली कंपनियों पर असर नहीं पड़ा है। अमेरिकी कंपनियों द्वारा कर्मचारियों की छंटनी का सिलसिला लगातार जारी है। मई माह की छंटनी रिपोर्ट में बताया गया है कि कंपनियां कर्मचारियों को नौकरी से निकालकर और अतिरिक्त कर्मचारियों की छंटनी कर अपने परिचालन में कटौती कर रही है।

अब सोना बना पहली पसंद

यूरोपीय देशों के वित्तीय संकट में फंसने की मजबूत होती आशंकाओं ने निवेशकों का रास्ता ही बदल दिया है। निवेशकों के लिए सोना सबसे भरोसेमंद विकल्प बनता जा रहा है। घरेलू और अंतरराष्ट्रीय दोनों स्तर पर सोने में निवेश बढ़ रहा है जिसके चलते सोने के दाम नई ऊंचाई छूने की तैयारी में है। निवेशकों को लग रहा है कि सोना ही निवेश का एकमात्र ऐसा विकल्प बचा है जो किसी भी देश के डिफाल्टर हो जाने की स्थिति में भी निवेश को नहीं डुबोएगा।

यही वजह है कि निवेशकों के पोर्टफोलियो में अचानक सोने की हिस्सेदारी बढ़ गई है। यह हिस्सेदारी दस प्रतिशत से बढ़कर 20–25 प्रतिशत क आ पहुंची है।

विदेशी निवेशकों ने शेयर बेचे

यूरो क्षेत्र में संकट का असर भारतीय शेयर बाजार में निवेश करने वाले विदेशी संस्थागत निवेशकों (एफआईआई) पर भी पड़ा है। बीते माह में एफआईआई ने भारतीय शेयर बाजार में 9,400 करोड़ रुपए (दो अरब डॉलर) के शेयरों की शुद्ध बिकवाली की है। इससे तीन तीन माह पहले तक एफआईआई शेयर बाजार में निवेश बढ़ाए जा रहे थे।

बाजार नियामक सेबी के पास उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार एफआईआई ने बीते माह में 52,192 करोड़ रुपए के शेयरों की सकल खरीददारी की, जबकि इस दौरान उन्होंने 61,628 करोड़ रुपए के शेयर बेचे।

स्पेन ने बिगाड़ी दुनियाभर के बाजारों की सेहत

जैसा कि पहले ही अभ्यास हो चुका था कि यूनानी कर्ज संकट की आंधी को रोकने में यूरोपीय संघ के उपाय नाकाफी है।

अब इस शक को स्पेन ने सही साबित कर दिया है। 10 खरब डॉलर के यूरोपीय संघ के पैकेज के बाद भी यहां बैकिंग क्षेत्र की हालत पतली है। यही वजह है कि यहां डूब रहे एक बड़े बैंक की मदद के लिए सरकार को आगे आना पड़ा है। इसके चलते यूरोपीय शेयर बाजारों के साथ दुनियाभर के बाजार लुढ़क गए। यूरो मुद्रा और कच्चे तेल में भी तेज गिरावट आई।

दीवालिया होने की कगार पर खड़े काजासुर बैंक को स्पेन सरकार ने अपने कब्जे में ले लिया है। इससे आशंका बढ़ है कि सरकार दूसरे वित्तीय संस्थाओं को बचाने के लिए भी ऐसे कदम उठा सकती है।

विशेषज्ञों के अनुसार स्पेनिश बैंक की हालत बेहद खराब है। स्पेन में संकटग्रस्त रीयल एस्टेट और कंस्ट्रक्शन कारोबार में यह बैंक 74 करोड़ यूरो से ज्यादा गंवा चुका है। यही हालत अन्य बैंकों की भी है। इस बात के भी आसार है कि स्पेन के बैंकिंग सेक्टर का असर दूसरे क्षेत्रों पर भी पड़ सकता है। वही यूरो मुद्रा चार साल के अपने निचले स्तर पर पहुंच चुकी है।

दुनियाभर के बाजारों में आई गिरावट के बीच विदेशी निवेशकों में भारतीय शेयर बाजार से धन निकालने की होड़ मच गई। जिसके चलते बीते माह भारतीय मुद्रा डालर के मुकाबले 72 पैसे कमजोर हो गई।

आवरण कथा

निराशा से भरा है यूपीए की दूसरी पारी का पहला साल

मनमोहन सिह की दूसरी पारी में सरकार पूरी तरह बिखरी नजर आती है। सत्ता की धुरी प्रधानमंत्री के न होने के कारण मंत्रियों में घोर अराजकता फैली हुई है। कभी चिदंबरम् और ममता बनर्जी के बीच नक्सल विरोधी अभियान को लेकर तकरार हो जाती है तो कभी बीटी बैगन को लेकन शरद पवार और जयराम रमेश लड़ते नजर आते हैं। गुलाम नबी आजाद, कमल नाथ और पृथ्वी राज चौहान भी सरकार की किरकिरी करा चुके हैं। और तो और कांग्रेस के कई वरिष्ठ नेता अपने ही मंत्रियों को निकम्मा, घमंडी और न जाने क्या क्या कहते है।

■ **स्वदेशी संवाद**

अभी हाल ही में एक अंग्रेजी पत्रिका ने यूपीए सरकार के काम–काज पर राय जानने के लिए एक सर्वेक्षण कराया जिसमें यह जानने की कोशिश की गई थी कि क्या प्रधानमंत्री के रूप में मनमोहन सिंह अपना पांच साल का दूसरा कार्यकाल पूरा कर पाएंगे।

लोगों की राय थी कि कमजोर विपक्ष और वामपंथियों के बाहर रहने के कारण मनमोहन सिंह को अपना दूसरा कार्यकाल पूरा करने में कोई दिक्कत नहीं होगी। पर इसी सर्वेक्षण में लोगों की यह राय भी सामने आई कि प्रधानमंत्री के रूप में मनमोहन सिंह अपने ही मंत्रियों के सामने फिसड्डी साबित हुए है।

सर्वेक्षण में भाग लेने वालों ने मनमोहन सिंह को कार्यकुशलता के मामले में पांचवे नंबर पर रखा है। लोगों ने उनसे कहीं अधिक काबिल गृहमंत्री पी. चिदंबरम, वित्तमंत्री प्रणब मुखर्जी, मानव संसाधनमंत्री कपिल सिब्बल और रक्षा मंत्री ए.के. एंटनी को माना है।

यानी प्रधानमंत्री के रूप मे मनमोहन सिंह से लोगों को घोर निराशा मिली है। और इसके लिए जिम्मेदार हैं – महंगाई, भ्रष्टाचार, और बेलगाम सरकार के मंत्री।

इसी सर्वेक्षण में भाग लेने वाले 67 फीसदी लोगों ने माना है कि यह सरकार महंगाई रोकने में पूरी तरह विफल रही है।

22 मई को यूपीए–2 की सरकार ने जब एक साल पूरा किया तो मनमोहन सिंह के पास कोई ऐसी उपलब्धि नहीं थी,

22 मई को यूपीए–2 की सरकार ने जब एक साल पूरा किया तो मनमोहन सिंह के पास कोई ऐसी उपलब्धि नहीं थी, जिसे वह जनता के सामने रख सकें। बड़ी हिम्मत के साथ उन्होंने रिपोर्ट कार्ड पेश किया तो भी उसमें सिर्फ खजाने को लुटाने के आकड़े थे। खुद प्रधानमंत्री इन उपलब्धियों को लेकर आश्वस्त नहीं थे। इसलिए उस दिन विज्ञान भवन में उन्होंने दबी जुबान से ही सही यह कह दिया कि मंहगाई उनके लिए चिंता की बात है। पर साथ में यह आशंका भी भर दी कि दिसंबर से पहले महंगाई पर अंकुश नहीं लग सकता।

जिसे वह जनता के सामने रख सकें।

बड़ी हिम्मत के साथ उन्होंने रिपोर्ट कार्ड पेश किया तो भी उसमें सिर्फ खजाने को लुटाने के आकड़े थे।

सबको शिक्षा का अधिकार, नरेगा, और मंदी से निपटने में सरकार की कथित कुशलता की गाथा गाई गई।

खुद प्रधानमंत्री इन उपलब्धियों को लेकर आश्वस्त नहीं थे। इसलिए उस दिन विज्ञान भवन में उन्होंने दबी जुबान से ही सही यह कह दिया कि मंहगाई उनके लिए चिंता की बात है। पर साथ में यह आशंका भी भर दी कि दिसंबर से पहले महंगाई पर अंकुश नहीं लग सकता।

यानी उनके पास कोई ऐसा उपाय नहीं है जिससे आम आदमी का दर्द कम किया जा सके। आर्थिक विश्लेषक इसी बात से आशंकित हैं। अर्थशास्त्रियों का मानना है कि यदि खाद्य पदार्थों की कीमत कम नहीं हुई तो अर्थव्यवस्था चरमरा जाएगी। इस समय खाद्य पदार्थों के मूल्य सूचंकाक की वृद्धि दर 16 फीसदी से भी अधिक है। और यह थमने का नाम नहीं ले रहा है।

प्रधानमंत्री के लिए मुसीबत यह है कि इन मामलों के प्रभारी मंत्री शरद पवार उनके काबू में नहीं है। उनकी प्राथमिकता

एक नहीं कई ऐसे प्रकरण सामने आए हैं जिनसे लगता है कि भ्रष्टाचार सरकार के भीतर तक घर बना चुका है। सीएजी और लोकलेखा समिति की रिपोर्ट बताती है कि नरेगा और कृषि राहत पैकेज तक में लूट मची हुई है। किसान अभी भी आत्महत्या कर रहे हैं और प्रधानमंत्री खामोशी से सब देख रहे हैं। एक तरफ खाद्य सुरक्षा विधेयक लागू किया जा रहा है दूसरी तरफ गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले लोग सूची से ही बाहर किए जा रहे हैं। हाल ही में महाराष्ट्र से यह रिपोर्ट आई थी कि अकेले विदर्भ इलाके में 30 लाख गरीबों का नाम सूची से हटा दिया गया।

आम लोगों में यह धारणा बनती जा रही है कि यूपीए सरकार में एक बार दाम बढ़ने के बजाए घटने की कोई संभावना नहीं है। चाहे अच्छा मानसून हो या अंतरराष्ट्रीय स्तर पर किसी खास चीज के दाम में गिरावट आई हो। सरकार कभी भी उसे अपने स्तर पर सुधार नहीं करती। इसका सीधा सा अर्थ है कि मनमोहन सिंह की सरकार आम जीवन के प्रति संवेदनशील होकर काम नहीं करती।

इस समस्या से पार पाने की भी नहीं है। वह किसानों और आम उपभोक्ताओं को भगवान भरोसे छोड़ खुद अन्य प्रकार की गतिविधियों में संलिप्त हैं। अर्थव्यवस्था की जानकारी रखने वाले किसी के लिए भी ये आकड़े परेशान कर सकते हैं।

इस समय थोक मूल्य सूचकांक लगभग 10 फीसदी के आस–पास है, जिसमें खाद्य पदार्थों का मूल्य सूचकांक लगभग 17 फीसदी है। औद्योगिक कामगारों के लिए यह थोक उपभोक्ता मूल्य सूचकांक साढ़े तेरह फीसदी तो कृषि श्रमिकों के लिए यह सूचकांक लगभग 15 फीसदी है।

गंभीर बात यह है कि उपभोक्ता वस्तुओं के साथ–साथ अब निर्माण क्षेत्र को भी महंगाई घेरने लगी है। धीरे–धीरे लागत में वृद्धि होती चली जा रही है और लोगों की आय बढ़ने के बजाए स्थिर है या कम हो रही है।

आम लोगों में यह धारणा बनती जा रही है कि यूपीए सरकार में एक बार दाम बढ़ने के बजाए घटने की कोई संभावना नहीं है। चाहे अच्छा मानसून हो, या अंतरराष्ट्रीय स्तर पर किसी खास चीज के दाम में गिरावट आई हो। सरकार कभी भी उसे अपने स्तर पर सुधार नहीं करती। इसका सीधा सा अर्थ है कि मनमोहन सिंह की सरकार आम जीवन के प्रति संवेदनशील होकर काम नहीं करती।

एक नहीं कई ऐसे प्रकरण सामने आए हैं जिनसे लगता है कि भ्रष्टाचार सरकार के भीतर तक घर बना चुका है। सीएजी और लोकलेखा समिति की रिपोर्ट बताती है कि नरेगा और कृषि राहत पैकेज तक में लूट मची हुई है। किसान अभी भी आत्महत्या कर रहे हैं और प्रधानमंत्री खामोशी से सब देख रहे हैं। एक तरफ खाद्य सुरक्षा विधेयक लागू किया जा रहा है दूसरी तरफ गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले लोग सूची से ही बाहर किए जा रहे हैं। हाल ही में महाराष्ट्र से यह रिपोर्ट आई थी कि अकेले विदर्भ इलाके में 30 लाख गरीबों का नाम सूची से हटा दिया गया। जबकि मनमोहन सिंह ने ही पिछली सरकार के दौरान विदर्भ के लिए 3750 करोड़ रुपये का विशेष पैकेज जारी किया था। शरद पवार और ए. राजा के घोटालों की कहानी अभी भी अंतहीन बनी हुई है।

गुलाम नबी आजाद, कमल नाथ और पृथ्वी राज चौहान भी सरकार की किरकिरी करा चुके हैं। और तो और कांग्रेस के कई वरिष्ठ नेता अपने ही मंत्रियों को निकम्मा, घमंडी और न जाने क्या क्या कहते है। नक्सल आंदोलन से निपटने के तरीके पर जितनी आलोचना विपक्ष ने की है उससे कही अधिक कांग्रेस के नेताओं ने की है।

मनमोहन सिह की दूसरी पारी में सरकार पूरी तरह बिखरी नजर आती है। सत्ता की धुरी प्रधानमंत्री के न होने के कारण मंत्रियों में घोर अराजकता फैली हुई है। कभी चिदंबरम् और ममता बनर्जी के बीच नक्सल विरोधी अभियान को लेकर तकरार हो जाती है तो कभी बीटी बैगन को लेकन शरद पवार और जयराम रमेश लड़ते नजर आते हैं।

गुलाम नबी आजाद, कमल नाथ और पृथ्वी राज चौहान भी सरकार की किरकिरी करा चुके हैं। और तो और कांग्रेस के कई वरिष्ठ नेता अपने ही मंत्रियों को निकम्मा, घमंडी और न जाने क्या क्या कहते है। नक्सल आंदोलन से निपटने के तरीके पर जितनी आलोचना विपक्ष ने की है उससे कही अधिक कांग्रेस के नेताओं ने की है। ❑

पश्चिम में गहराते आर्थिक संकट से बचे भारत

पिछले कुछ समय से भारत में भी विदेशी संस्थागत निवेशक लगातार अपने कृत्यों के द्वारा शेयर बाजारों में उथल–पुथल मचाते रहे हैं। समय आ गया है कि ब्राजील की तर्ज पर विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा शेयरों की खरीद पर टैक्स तो लगाया ही जाए साथ ही साथ उनके द्वारा खरीदे गये शेयरों पर कम से कम तीन वर्ष का 'लॉक इन पीरियड' भी लगाया जाए। ऐसे में विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा लाई जा रही 'हॉट मनी' पर प्रभावी नियंत्रण लगाया जा सकेगा और देश को संभावित आर्थिक उथल–पुथल से भी बचाया जा सकेगा।

■ डॉ. अश्विनी महाजन

पिछले लगभग दो वर्षों से अमरीका और यूरोपीय देश भारी आर्थिक संकट से गुजर रहे हैं। अमरीका की वित्तीय क्षेत्र की अग्रणी कंपनी लेहमन ब्रदर्स से लेकर कार निर्माण की जनरल मोटर्स, जैसी ढ़ेरों कंपनियां स्वयं को दिवालिया घोषित कर चुकी हैं। उनकी बैंकिंग व्यवस्था चरमरा गयी है। सब–प्राइम उधार यानि हैसियत से ज्यादा उधार बांटे जाने से ये संकट उत्पन्न हुआ और खरबों डालर का सहायता कार्यक्रम अमरीकी सरकार द्वारा लागू किया गया। इस संकट से प्रभावित यूरोपीय देशों की सरकारों ने भी भारी आर्थिक सहायता के दम पर अपने–अपने देशों को बचाने का प्रयास किया है।

पिछले कुछ महीनों से यूरोपीय समुदाय का एक देश ग्रीस गंभीर आर्थिक संकट में आ गया है। इस बार यह संकट आम लोगों को बैंकों द्वार अधिक उधार देने से नहीं बल्कि वहां की सरकार द्वारा भारी उधार लेने और उसको न चुका पा सकने की स्थिति के कारण उत्पन्न हुआ। अमरीका का संकट मुख्य तौर पर वित्तीय क्षेत्र से जुड़ा था, ग्रीस का संकट वहां की सरकार के दिवालियेपन से जुड़ा था। जाहिर है किसी भी देश का अस्तित्व सरकार की साख पर निर्भर करता है।

पिछले कुछ महीनों से यूरोपीय समुदाय का एक देश ग्रीस गंभीर आर्थिक संकट में आ गया है। इस बार यह संकट आम लोगों को बैंकों द्वार अधिक उधार देने से नहीं बल्कि वहां की सरकार द्वारा भारी उधार लेने और उसको न चुका पा सकने की स्थिति के कारण उत्पन्न हुआ। अमरीका का संकट मुख्य तौर पर वित्तीय क्षेत्र से जुड़ा था, ग्रीस का संकट वहां की सरकार के दिवालियेपन से जुड़ा था।

ग्रीस की सरकार अपने द्वारा लिये गये ऋणों को चुका नहीं पा रही थी, जिसके कारण यह संकट उत्पन्न हो गया था। फिलहाल यूरोपीय समुदाय से मिली 8.5 अरब यूरो की सहायता से 19 मई 2010 को परिपक्व हो रहे सरकारी उधार को चुका कर ग्रीस का संकट अभी टल कुछ समय के लिए टल गया है।

संकट केवल ग्रीस का नही है

लेकिन यह संकट मात्र ग्रीस का ही

नहीं है बल्कि इसी प्रकार की स्थिति लगभग यूरोप के सभी देशो में है। कुछ दिन पहले ही जर्मनी ने अपने शेयर बाजारों में 'शार्ट सेलिंग' यानि बिना वित्तीय परिपत्र खरीदे उसे बेचने पर प्रतिबंध लगाकर यूरोपीय समुदाय को लगभग चौंका दिया। सरकार का यह कदम प्रतिबंध जर्मनी में भी इसी प्रकार के संकट की ओर इंगित करता है। हालांकि जर्मन सरकार का यह कहना है कि ऐसा सट्टेबाजों द्वारा सरकारी उधार की लागत को बढ़ाने से रोकने के लिए किया गया है। ग्रीस, पुर्तगाल और आयरलैंड का सरकारी ऋण जी.डी.पी. के 60 प्रतिशत को भी पार कर गया है और वहां की सरकारें राजकोषीय कटौती यानि सरकारी कर्मचारियों के वेतन को स्थिर अथवा उनमें कटौती करने की घोषणाएं कर चुकी हैं। उधर इटली में भी संकट के बादल मंडरा रहे हैं। अभी तक कुछ मजबूत दिखने वाला देश इंग्लैंड भी इस संकट से अछूता नहीं है। इसका असर यह हो रहा है कि यूरोपीय देशों की साझा करेंसी 'यूरो' अन्य करेंसियों के मुकाबले लगातार कमजोर हो रही है। जहां दिसम्बर 2009 में 'यूरो' की विनिमय दर 70 रूपये थी वह घटकर अब मात्र 56 रूपये पर आ गई है। शेयर बाजारों में लगातार गिरावट आ रही है और उसका असर दूसरे मुल्कों पर भी पड़ने लगा है। भारत का शेयर सूचकांक पिछले कुछ दिनों से लगातार घटता जा रहा है। कहा जा रहा है कि भारत में निवेश करने वाले विदेशी संस्थागत निवेशक अपना पैसा शेयर बाजारों से निकाल कर सुरक्षित निवेशों जैसे सरकारी बांडों और सोने में लगाते जा रहे हैं। पिछले कुछ ही दिनों में विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा अपना धन बाहर ले जाने से रूपया कमजोर हुआ है।

यूरोपीय समुदाय और अंतराष्ट्रीय मुद्राकोष द्वारा लगभग एक खरब अमरीकी डालर की साझी सहायता के पैकेज से इस समस्या का सामाधान खोजा जा रहा है। लेकिन ऐसा माना जा रहा है कि इन तमाम प्रयासों के बावजूद यूरोप का संकट थमने वाला नहीं है। हालांकि इस पैकेज की घोषणा के बाद पहले तो शेयर बाजारों ने स्वागत किया लेकिन बाद में वे फिर से नुकसान में आ गए और यही नहीं उन्होंनें समस्त विश्व के शेयर बाजारों में रौनक समाप्त कर दी।

अमरीका में आई भयनाक मंदी के बाद भी भारत की विकास यात्रा थमी नहीं। हालांकि संवृद्धि दर पर कुछ असर जरूर पड़ा। लेकिन जहां वर्ष 2009–10 में दुनिया की जी.डी.पी. एक प्रतिशत कम हुई, भारत में सात प्रतिशत से ज्यादा कि संवृद्धि दर दर्ज की गई।

भारत की ओर आकर्षित हो रहे निवेशक

अमरीका में आई भयनाक मंदी के बाद भी भारत की विकास यात्रा थमी नहीं। हालांकि संवृद्धि दर पर कुछ असर जरूर पड़ा। लेकिन जहां वर्ष 2009–10 में दुनिया की जी.डी.पी. एक प्रतिशत कम हुई, भारत में सात प्रतिशत से ज्यादा कि संवृद्धि दर दर्ज की गई। कमोबेश यही स्थिति चीन में भी रही, हालांकि चीन को अंर्तराष्ट्रीय व्यापार में थोड़ा ज्यादा घाटा सहना पड़ा। विश्व में स्थितियां इस प्रकार की बन रही हैं कि अमरीका, यूरोप, और जापान सभी देशों में प्रतिफल दर घट कर शून्य तक पहुंच चुकी है। इसका मतलब यह है कि निवेशकों को उनके निवेश पर शून्य प्रतिशत प्रतिफल मिल रहा है। ऐसे में निवेशक बेहतर विकल्पों की तलाश में अब एशियाई देशों का रूख कर रहें हैं। भारत में लगातार बढ़ती जी.डी.पी., ढांचागत क्षेत्र में हो रहे भारी निवेश और इन सब के कारण बढ़ती हुई मांग अब उन्हें भारत में विकल्प खोजने को प्रेरित कर रही है। इसलिए फिलहाल पश्चिमी देशों के संकट से हाथ जलाए वित्तीय संस्थान डर कर सोना अवश्य खरीद रहे हैं, दीर्घकाल में वे अधिक से अधिक पैसा भारत और अन्य एशियाई देशों में लेकर आएंगे।

भारत बरते एहतियात

लेकिन हमें ध्यान रखना होगा कि यह 'हॉट मनी' यानि गरम पैसा ऐसा निवेश है जो बहुत जल्दी उड़नछू हो जाता है। ऐसे में जिस देश के साथ यह घटित होता है उसे भारी नुकसान सहना पड़ता है। इस प्रकार के संकटो से बचने के लिए ब्राजील द्वारा विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा शेयर और बांड खरीदने पर वर्ष 2009 में टैक्स लगा दिया गया और इस प्रकार ब्राजील में विदेशी संस्थागत निवेशकों पर प्रभावी नियंत्रण भी लग सका। पिछले कुछ समय से भारत में भी विदेशी संस्थागत निवेशक लगातार अपने कृत्यों के द्वारा शेयर बाजारों में उथल–पुथल मचाते रहे हैं। समय आ गया है कि ब्राजील की तर्ज पर विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा शेयरों की खरीद पर टैक्स तो लगाया ही जाए साथ ही साथ उनके द्वारा खरीदे गये शेयरों पर कम से कम तीन वर्ष का 'लॉक इन पीरियड' भी लगाया जाए। ऐसे में विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा लाई जा रही 'हॉट मनी' पर प्रभावी नियंत्रण लगाया जा सकेगा और देश को संभावित आर्थिक उथल–पुथल से भी बचाया जा सकेगा। ❑

सुलगता पूर्वोत्तर

पूर्वोत्तर राज्यों की प्रमुख चिंता आर्थिक विकास की है, जिस पर कांग्रेस की अवसरवादी नीतियों से ग्रहण लगे। डिगबोई से प्राप्त कच्चे तेल के परिशोधन हेतु बरौनी (बिहार में बेगूसराय जिला में स्थित) में संयंत्र लगाने का क्या औचित्य था? यदि असम में ही यह संयंत्र लगाया जाता तो स्थानीय निवासियों के लिए रोजगार के बड़े अवसर उपलब्ध होते. . . . पूर्वोत्तर में शांति लाने के लिए सरकार को उसके समग्र विकास के साथ उसकी नृजातीय विशेषता व विविधता के बीच संतुलन कायम करने की आवश्यकता है। इसके लिए चर्च प्रायोजित धर्मांतरण और आईएसआई पोषित घुसपैठ पर अंकुश लगाना अपरिहार्य हो चुका है।

■ **बलवीर पुंज**

आज पूरा पूर्वोत्तर अलगाववाद की चपेट में है तो इसके लिए केंद्र की नीतियां ही जिम्मेवार हैं। आजादी के बाद समस्त पूर्वोत्तर का असम ही प्रतिनिधि हुआ करता था। मणिपुर और त्रिपुरा को छोड़कर पूर्वोत्तर का प्रायः सारा क्षेत्र किसी न किसी तरह असम से जुड़ा था। इस क्षेत्र में बसने वाले विभिन्न जनजातीय समूहों द्वारा स्वतंत्रता और संप्रभुता की मांग तेज होने के बाद वर्ष 1972 में केंद्र ने असम की कोख से अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड पैदा किया।

राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या पिछले काफी दिनों से नगा अलगाववादियों के कब्जे में है। नागालैंड के प्रवेशद्वार दिमापुर के पास की गई इस नाकेबंदी के कारण मणिपुर में आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति ठप्प हो गई है, जनजीवन अस्तव्यस्त है। विगत माह से राष्ट्रीय राजमार्ग 53 स्थित दक्षिणी असम के सिलचर के रास्ते आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति शुरू की गई है, किंतु सड़कों की दुर्दशा के कारण भारी वाहनों का जाना असंभव है। छोटी गाड़ियों से की जा रही आपूर्ति ऊंट के मुंह में जीरा साबित हो रही है।

वहीं राष्ट्रीय राजमार्ग 39 स्थित दिमापुर में भारी वाहनों का तांता लग गया है, जिन पर पेट्रोल–डीजल से लेकर रोजाना की जरूरतों के सामान लदे पड़े हैं। एक खबर के अनुसार काले बाजार में पेट्रोल 200 रुपये प्रति लीटर बिक रहा है। खाने–पीने की वस्तुओं की किल्लत के कारण पहले से ही महंगी वस्तुओं की कीमतें आसमान छू रही हैं। जीवनरक्षक औषधियों का अकाल हो गया है।

अलगाववादी संगठन नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल आफ नागालैंड (इसाक–मुइवा गुट) के महासचिव थुंईगालेंग मुइवा के मणिपुर प्रवेश पर राज्य सरकार द्वारा प्रतिबंध लगाने के कारण अनेक नागा संगठन विद्रोह पर उतर आए हैं। मणिपुर के सोमदाल में मुइवा का पुश्तैनी घर है और अरसे बाद वह वहां जाना चाहते थे और इसके लिए केंद्र सरकार से उन्होंने अनुमति भी प्राप्त कर ली थी। जबकि मणिपुर के कांग्रेसी मुख्यमंत्री इबोबी सिंह का तर्क है कि मुइवा के साथ संघर्ष विराम की शर्त मणिपुर में लागू नहीं होती।

ग्रेटर नागालैंड के लिए आंदोलन चला रहे मुइवा जब तक अपनी अलगाववादी नीति पर कायम हैं, तब तक वे मणिपुर के लिए भगोड़ा हैं। अलगाववाद

को लेकर कांग्रेस की दोहरी नीति का ज्वलंत प्रमाण स्वयं मणिपुर की अराजक स्थिति है। कांग्रेसी मुख्यमंत्री इरोम इबोबी सिंह के खिलाफ दो उग्रवादी संगठनों–कांगलेई यावोल कन्नालूप को वर्ष 2005 में 50 लाख और रिवोल्यूशनरी पीपुल्स फ्रंट को एक करोड़ रुपये चंदा देने के सबूत खुफिया विभाग के पास हैं।

केंद्रीय गृहमंत्री और प्रधानमंत्री कार्यालय को तत्कालीन सैन्य प्रमुख कर्नल जेजे सिंह ने यह सूचना भेजी थी। इबोबी सिंह का अब तक मुख्यमंत्री पद पर बने रहना क्या संकेत करता है? राज्य के बहुसंख्यक मैतियों को खुश करने के लिए इबोबी सिंह ने मुईवा के प्रवेश पर प्रतिबंध लगाकर घाटी में रहने वाले नागाओं को फिर से बंदूक उठाने के लिए विवश कर दिया है, जो ग्रेटर नागालिम के लिए सत्ता अधिष्ठान से लंबे समय से संघर्षरत हैं।

आज पूरा पूर्वोत्तर अलगाववाद की चपेट में है तो इसके लिए केंद्र की नीतियां ही जिम्मेवार हैं। आजादी के बाद समस्त पूर्वोत्तर का असम ही प्रतिनिधि हुआ करता था। मणिपुर और त्रिपुरा को छोड़कर पूर्वोत्तर का प्रायः सारा क्षेत्र किसी न किसी तरह असम से जुड़ा था। इस क्षेत्र में बसने वाले विभिन्न जनजातीय समूहों द्वारा स्वतंत्रता और संप्रभुता की मांग तेज होने के बाद वर्ष 1972 में केंद्र ने असम की कोख से अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड पैदा किया।

आजादी के दो दशक बाद तक कांग्रेस ने बहुत ही धूर्ततापूर्वक नागा, मिजो, खासी जनजातियों के ऊपर असमियों के प्रभुत्व को एकीकृत भारत की जरूरत के नाम पर पोषित किया था। देश के रक्तरंजित विभाजन के बाद से ही असम अपने जनसांख्यिकीय स्वरूप में तेजी से आ रहे बदलाव से खासा चिंतित था।

विभाजन के बाद असम और त्रिपुरा में बंगाली शरणार्थियों की संख्या तेजी से बढ़ी। 1961 तक शरणार्थियों की संख्या छह लाख से ऊपर पहुंच गई। केंद्र ने राज्य सरकार पर सबको समायोजित करने का दबाव डाला और जब तत्कालीन मुख्यमंत्री गोपीनाथ बोरदोलई ने इसका विरोध किया तो पंडित जवाहर लाल नेहरू ने विकास मद में दिए जाने वाले केंद्रीय अनुदान में भारी कटौती करने की धमकी दी। राज्य सरकार का घुटने टेकना असमियों से पचा नहीं।

कालांतर में अप्रवासियों को निकाल बाहर करने के लिए हिंसक आंदोलन हुए। पूर्वोत्तर राज्यों की प्रमुख चिंता आर्थिक विकास की है, जिस पर कांग्रेस की अवसरवादी नीतियों से ग्रहण लगे। डिगबोई से प्राप्त कच्चे तेल के परिशोधन हेतु बरौनी (बिहार में बेगूसराय जिला में स्थित) में संयंत्र लगाने का क्या औचित्य था? यदि असम में ही यह संयंत्र लगाया जाता तो स्थानीय निवासियों के लिए रोजगार के बड़े अवसर उपलब्ध होते।

असम के पुनर्गठन तक असमी संभ्रांत वर्ग ने कांग्रेस के साथ मिलकर बांग्लादेशी घुसपैठियों को बसने की इजाजत दी। वस्तुतः इस सौदेबाजी से जहां असमी संभ्रांत वर्ग का बंगाली, मिजो, खासी आदि जातियों पर प्रभुत्व बना रहा, वहीं कांग्रेस को ठोस वोट बैंक मिला।

इस क्षुद्र राजनीति के कारण 1980 में असम असंतोष भड़क उठा, किंतु इंदिरा गांधी की सरकार ने उसे निरंकुशता पूर्वक दबा दिया। बांग्लादेश से आए अवैध घुसपैठियों के विरोध में 1983 के चुनावों का बहिष्कार भी किया गया, क्योंकि बिना किसी पहचान के लाखों बांग्लादेशियों का नाम मतदाता सूची में दर्ज कर लिया गया था। मूल निवासियों के विरोध की अनदेखी करते हुए तत्कालीन सरकार चुनाव कराने पर अड़ी रही। चुनाव बहिष्कार के कारण केवल 10 प्रतिशत मतदान ही दर्ज हो सका।

किंतु कांग्रेस ने इसे ही पूर्ण जनादेश माना और राज्य में चुनी हुई सरकार का गठन कर लिया गया। 1983 में कांग्रेस सरकार ने अवैध घुसपैठियों की पहचान असंभव करने के लिए अवैध परिव्रजन (पहचान अधिकरण) अधिनियम पारित किया। आज असम की समस्या सुरसा की तरह विकराल हुई है तो इसके लिए यह अधिनियम ही प्रमुख रूप से जिम्मेवार है, जिसे वर्तमान कांग्रेस नीत सरकार अदालती आदेश की अनदेखी कर पिछवाड़े से जारी रखे हुए है।

जनगणना 2001 के आंकड़ों में असम की आबादी शामिल नहीं करना अवैध मुस्लिम घुसपैठियों की समस्या की विकरालता का प्रमाण है। जहां तक मणिपुर और नागालैंड का प्रश्न है, यहां भी इन राज्यों का जनसांख्यिकीय स्वरूप ही अलगाववाद को हवा दे रहा है। इसाक मुइवा का संगठन ग्रेटर नागालैंड की मांग करता है, जिसमें मणिपुर, असम, अरुणाचल प्रदेश के वैसे क्षेत्र भी शामिल हैं, जहां ईसाइयत में धर्मातरित नागा रहते हैं। मिजो नेशनल फ्रंट मणिपुर के मिजो बहुलता वाले क्षेत्र को मिजोरम में शामिल करना चाहता है। उल्फा और नेशनल फ्रंट आफ बोडोलैंड का मकसद अलग–अलग है।

बोडोलैंड ब्रह्मपुत्र नदी के उत्तरी किनारे पर स्वाधीन बोडोलैंड के लिए आंदोलन चला रहा है, वहीं उल्फा का उद्देश्य स्वाधीन अहोम है। प्रायः समस्त पूर्वोत्तर एक पहाड़ी क्षेत्र है, जहां कृषि योग्य भूमि नाममात्र ही है। स्वतंत्र व्यापार चलाने के लिए कोई नजदीकी समुद्री संपर्क भी नहीं है।

पूर्वोत्तर में शांति लाने के लिए सरकार को उसके समग्र विकास के साथ उसकी नृजातीय विशेषता व विविधता के बीच संतुलन कायम करने की आवश्यकता है। इसके लिए चर्च प्रायोजित धर्मांतरण और आईएसआई पोषित घुसपैठ पर अंकुश लगाना अपरिहार्य हो चुका है। ❑

(लेखक राज्यसभा सांसद हैं)

कृषि, कर्ज और महंगाई की चुनौतियां

टिकाऊ खेती को प्रोत्साहित करने के लिए व बिना रासायनिक खाद व कीटनाशक के उगाई गई फसल को स्वास्थ्य के लिए विशेष उपयोगी मानते हुए ऐसी फसल के लिए विशेष प्रोत्साहन व बेहतर कीमत की व्यवस्था होनी चाहिए। किसान व उपभोक्ता एक दूसरे के नजदीक आएं। शोषण करने वाले बिचौलियों की भूमिका न्यूनतम की जानी चाहिए। फसलों के चुनाव में स्थानीय भोजन के जरूरी खाद्य पदार्थों जैसे अनाज, दलहन, तिलहन, सब्जी को प्राथमिकता देनी चाहिए। दूसरी प्राथमिकता स्थानीय पशुपालन के लिए चारे, कुटीर उद्योगों के लिए जरूरी फसल विशेषकर हाथ की कताई–बुनाई के लिए देसी कपास को मिलनी चाहिए।

■ भारत डोगरा

जहां एक ओर कृषि नीति के सामने महंगाई व किसानों के कर्ज की ज्वलंत समस्याएं हैं, वहीं दूसरी ओर जलवायु बदलाव के संकट से जूझना भी जरूरी है। वैसे तो पहले भी यह बार–बार अहसास हो रहा था कि न्याय, समता व पर्यावरण हितों की रक्षा और खेती में टिकाऊ प्रगति के लिए कृषि–नीति में बदलाव जरूरी हो गए हैं।

अब जब जलवायु बदलाव के कुछ दुष्परिणाम नजर आने लगे हैं और आगे भी विकट स्थिति की आशंका है, न्याय व पर्यावरण रक्षा से जुड़े इन बदलावों की जरूरत अब पहले से और अधिक हो गई है। सरकारी नीतियों में बड़ा और महत्वपूर्ण झुकाव सबसे कमजोर वर्गों व छोटे किसानों के पक्ष में होना चाहिए। साथ ही गांवों के प्रति व कृषि से जुड़ी आजीविकाओं के प्रति भी सरकार का झुकाव हो। यह झुकाव पर्यावरण रक्षा, आपदा–बचाव व राहत कार्यों को बेहतर करने के प्रति भी होना चाहिए। नए खतरों व चुनौतियों का सामना करने के लिए सरकार को इस तरह का बदलाव अपने बजट वितरण में, अपने प्रशासनिक तंत्र की प्राथमिकताओं में व हर स्तर पर करना होगा।

भारतीय गांवों की स्थिति में जैविक खेती के साथ कम खर्च की खेती, सस्ती खेती व आत्म–निर्भरता की खेती जोड़ना जरूरी है। जो खेती स्थानीय संसाधनों के बेहतर उपयोग पर आधारित है, वही आत्म–निर्भर है, वही सस्ती भी है। हमारा संदर्भ मुख्य रूप से छोटे किसानों का है, जिनके पास खर्च करने की क्षमता बहुत कम है।

बजट वितरण में बदलाव कर कहीं अधिक बजट का हिस्सा कृषि व पर्यावरण रक्षा के लिए उपलब्ध करना चाहिए। सस्ती व टिकाऊ खेती के लिए सरकार की नीतियों में इस तरह का बदलाव बहुत जरूरी है कि वह रासायनिक खाद व कीटनाशक को निरर्थक व हानिकारक सब्सिडी देने के स्थान पर अपने तमाम उपलब्ध वित्तीय, प्रशासनिक, वैज्ञानिक संसाधनों का उपयोग जैविक कृषि को बढ़ावा देने के लिए करे व जैविक कृषि अपनाने वाले किसानों की सहायता करे।

भारतीय गांवों की स्थिति में जैविक खेती के साथ कम खर्च की खेती, सस्ती खेती व आत्म–निर्भरता की खेती जोड़ना जरूरी है। जो खेती स्थानीय संसाधनों के बेहतर उपयोग पर आधारित है, वही आत्मनिर्भर है, वही सस्ती भी है। हमारा संदर्भ मुख्य रूप से छोटे किसानों का है, जिनके पास खर्च करने की क्षमता बहुत कम है। रासायनिक खाद व कीटनाशकों पर निर्भरता ने उन्हें कर्जग्रस्त कर दिया। अतः स्थानीय तौर पर उपलब्ध गोबर, पत्तियां, फसल अवशेष, गोमूत्र, नीम आदि के बेहतर उपयोग व साथ ही जैव–विविधता व उचित फसल–चक्रों को अपनाकर भूमि के प्राकृतिक उपजाऊपन को बनाए रखने व हानिकारक कीड़ों को दूर रखने का उद्देश्य प्राप्त करना चाहिए। जैविक कृषि के प्रसार को हमें अलगाव में नहीं देखना है, बल्कि जल व नमी संरक्षण, पेड़ों व चरागाहों की हरियाली व पशुधन की समृद्धि के ऐसे माहौल के साथ–साथ बढ़ाना है, जिसमें जैविक कृषि के पनपने की अच्छी संभावनाएं प्राप्त होती हैं। इसके साथ ही फसलों व प्रत्येक फसल की किस्मों की विविधता व उचित फसल–चक्र भी महत्वपूर्ण है। हरित क्रांति के नाम पर मूलतः फसलों की वे किस्में फैलाई गई, जो अधिक रासायनिक खाद के उपयोग के आधार पर उत्पादकता अधिक बढ़ाने का दावा करती थीं। अतः इन बीजों के आधार पर जैविक कृषि के प्रसार में एक विरोधाभास है। अतः मूलतः हमें परंपरागत बीजों की विरासत की ओर लौटना होगा और इनके आधार पर जैविक कृषि से बेहतर उत्पादकता बढ़ाने के प्रयास भी करने होंगे। डा. आरएच रिछारिया जैसे शीर्ष वैज्ञानिकों के शोधों से यह स्पष्ट हो गया है कि परंपरागत किस्मों में अनेक

ऊंची उत्पादकता देने वाली किस्में मौजूद हैं, जो रासायनिक खाद व कीटनाशक दवा के उपयोग के बिना ऊंची उत्पादकता देने में सक्षम हैं। सरकार को भूमि–सुधार के क्षेत्र में अपना ध्यान पूरी तरह भूमिहीनों को भूमि उपलब्ध करवाने व उन्हें सफल

हरित क्रांति के नाम पर मूलतः फसलों की वे किस्में फैलाई गई, जो अधिक रासायनिक खाद के उपयोग के आधार पर उत्पादकता अधिक बढ़ाने का दावा करती थीं। अतः इन बीजों के आधार पर जैविक कृषि के प्रसार में एक विरोधाभास है। अतः मूलतः हमें परंपरागत बीजों की विरासत की ओर लौटना होगा और इनके आधार पर जैविक कृषि से बेहतर उत्पादकता बढ़ाने के प्रयास भी करने होंगे।

किसान बनाने पर केंद्रित करना चाहिए। इन भूमिहीनों के साथ उन्हें भी जोड़ देना चाहिए, जो लगभग भूमिहीन ही हैं या जिनके पास नाममात्र को ही भूमि है। इसके लिए वर्तमान सीलिंग कानूनों के तहत बड़े भूस्वामियों से भूमि प्राप्त की जा सकती है।

भूदान कार्यक्रम के तहत प्राप्त भूमि जो ठीक से नहीं बंटी, वह भी वितरित की जा सकती है। गांव की जमीन पर जो अवैध कब्जे हैं, वे हटाए जा सकते हैं। शहरों में अनेक धनी परिवार हैं, जिनका गांव की खेती–किसानी से कोई संबंध नहीं रहा और न ही वे भविष्य में खेती कर पाएंगे, उनकी भूमि का एक बड़ा हिस्सा भी गांव के मेहनतकश भूमिहीनों को दिया जा सकता है। वन–विभाग की बहुत–सी जमीन खाली पड़ी है। यह जमीन खेती के लिए भूमिहीन परिवारों को दी जा सकती है। बहुत–सी बंजर पड़ी भूमि को सरकार अपने प्रयास से खेती योग्य बनाकर

भूमिहीनों को दे सकती है। वाटरशेड परियोजनाओं को समता–आधारित खेती से भी जोड़ना चाहिए। भूमि सुधार से जोड़ना चाहिए ताकि गरीब व छोटे किसानों को इन परियोजनाओं का अधिक लाभ मिले। किसी स्थान की फसलें व फसल–चक्र वहां उपलब्ध जल के अनुकूल होनी चाहिए।

नई बड़ी परियोजनाओं से कुछ समय के लिए परहेज कर पहले से बनी परियोजनाओं के बेहतर उपयोग पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। नदी–जोड़ परियोजनाओं से परहेज करना चाहिए। किसी बड़े उद्योग की अपेक्षा कृषि व खाद्य उत्पादन के लिए जल–उपलब्धि को प्राथमिकता मिलनी चाहिए। वायु व जल–प्रदूषण, हानिकारक गैस आदि के खतरों से किसानों की रक्षा होनी चाहिए। सभी स्तरों पर खेती को खर्चीली बनने से रोकना चाहिए और एक महत्वपूर्ण उद्देश्य यह होना चाहिए कि किसान कर्जग्रस्त होने से बच सकें। इसके बावजूद किसान को कर्ज की जरूरत पड़ ही जाए तो सरकार को कम ब्याज पर व साधारण ब्याज की दर पर कर्ज देना चाहिए।

बचत की आदत डालने और सूदखोरी से बचने के लिए स्वयंसहायता समूहों को प्रोत्साहित करना चाहिए। किसानों को अपनी उपज की वर्तमान कीमत की अपेक्षा कहीं बेहतर कीमत मिलनी चाहिए। खेती–किसानी बहुत कुशलता का कार्य है, अतः कीमत निर्धारण में किसान के कार्य की कुशलता को पूरी मान्यता मिलनी चाहिए।

किसान की जरूरतों को समझते हुए किसानों के परिवार के सदस्यों की संख्या का वास्तविकता पर आधारित अनुमान ध्यान में रखना होगा। टिकाऊ खेती को प्रोत्साहित करने के लिए व बिना रासायनिक खाद व कीटनाशक के उगाई गई फसल को स्वास्थ्य के लिए विशेष उपयोगी मानते हुए ऐसी फसल के लिए विशेष प्रोत्साहन व बेहतर कीमत की व्यवस्था होनी चाहिए। किसान व उपभोक्ता एक दूसरे के नजदीक आएं। शोषण करने वाले बिचौलियों की भूमिका न्यूनतम की जानी चाहिए। फसलों के चुनाव में स्थानीय भोजन के जरूरी खाद्य पदार्थो जैसे अनाज, दलहन, तिलहन, सब्जी को प्राथमिकता देनी चाहिए। दूसरी प्राथमिकता स्थानीय पशुपालन के लिए चारे, कुटीर उद्योगों के लिए जरूरी फसल विशेषकर हाथ की कताई–बुनाई के लिए देसी कपास को मिलनी चाहिए। कृषि की समृद्धि व पशुपालन की समृद्धि को एक–दूसरे का पूरक मानकर आगे बढ़ना चाहिए। सभी पशुओं की भलाई पर ध्यान देना चाहिए व गाय–बैल रक्षा का विशेष प्रयास करना चाहिए। जेनेटिक इंजीनियरिंग से जुड़े अनेक खतरों को देखते हुए जेनेटिक इंजीनियरिंग से प्राप्त फसलों के प्रसार पर पूरी तरह रोक लगनी चाहिए। ऐसे में कहीं न कहीं हमें महंगाई से बचने और जलवायु परिवर्तन लड़ने में मदद मिलेगी। साथ किसानों की दशा में सुधार भी होगा। ❑

सभी स्तरों पर खेती को खर्चीली बनने से रोकना चाहिए और एक महत्वपूर्ण उद्देश्य यह होना चाहिए कि किसान कर्जग्रस्त होने से बच सकें। इसके बावजूद किसान को कर्ज की जरूरत पड़ ही जाए तो सरकार को कम ब्याज पर व साधारण ब्याज की दर पर कर्ज देना चाहिए। बचत की आदत डालने और सूदखोरी से बचने के लिए स्वयंसहायता समूहों को प्रोत्साहित करना चाहिए।

हमारे किसान बदहाल क्यों?

भारत में किसान मर रहे हैं, जबकि यूरोप में किसानों को 4000 रुपये प्रति हेक्टेयर प्रत्यक्ष अनुदान मिल रहा है। यह राशि भारत के किसानों की औसत आमदनी से लगभग दोगुनी है। मेरी समझ में नहीं आता है कि उत्तर भारत के कृषि क्षेत्रों के किसान नेता और राजनेता इसे राजनीतिक मुद्दा क्यों नहीं बनाते। आखिरकार, जब हजारों गन्ना किसान राजनेताओं के समर्थन पर नई दिल्ली को घेरकर अधिक गन्ना मूल्य की मांग मानने को बाध्य कर सकते हैं तो ये किसान संगठन और राजनेता अमेरिका और यूरोप के मारक अनुदान का मुद्दा उठाने और यह बताने में विफल क्यों हैं कि देश में कृषक समुदाय अस्तित्व के संकट से जूझ रहा है।

■ देविंदर शर्मा

भारत में किसानों की आत्महत्या को लेकर छिड़ी बहस के बीच अमेरिका में किसानों को अनुदान दिए जाने के बारे में एक दिलचस्प रिपोर्ट आई। 1997 से 2008 के बीच भारत में करीब दो लाख किसानों ने बढ़ते कर्ज के कारण होने वाले अपमान से बचने के लिए अपनी जान देने का आत्मघाती कदम उठाया। इन किसानों को सरकार से किसी प्रकार की सीधी सहायता नहीं मिली थी।

अमेरिका ने 1995 से 2009 के बीच 12,50,000 करोड़ रुपए का कृषि अनुदान अपने किसानों को दिया। किसानों को न केवल सीधी आर्थिक सहायता मिली, बल्कि उन्होंने 'प्रति–चक्र भुगतान' और 'बाजार घाटा भुगतान' जैसे लाभ भी हासिल किए। अब वे फसल बीमा कार्यक्रम और बायो–फ्यूल कार्यक्रम के तहत अनुदान हासिल कर रहे हैं। एक तरफ भारत के किसान जान देने को मजबूर हो रहे हैं, वहीं अमेरिका के किसान ऐशोआराम की जिंदगी बिता रहे हैं। इसके बावजूद वाणिज्य मंत्री आनंद शर्मा देश को गुमराह करते हुए कहते हैं कि विश्व व्यापार संगठन के नियमों के तहत वह भारतीय किसानों को कोई नुकसान नहीं होने देंगे। अमेरिका और यूरोप ने डब्ल्यूटीओ वार्ता की मेज पर जाने के बाद से डालर के रूप में दिए जा रहे कृषि अनुदान में कोई कटौती नहीं की। इसके उलट उन्होंने कृषि अनुदान में बढ़ोतरी ही की है। इस कारण वे अपने कृषि उत्पादों को भारत में खपा कर यहां कृषि को अलाभकारी बनाने में आसानी से कामयाब हो जाते हैं।

भारत में किसान चिलचिलाती धूप में जानवरों की तरह काम करते हैं फिर भी एक माह में प्रति किसान परिवार 2400 रुपये से अधिक नहीं कमा पाता। एक साल में यह राशि मात्र 28 हजार रुपये बैठती है। उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश और राजस्थान में कृषि से आय राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत के किसान गरीबी रेखा से काफी नीचे जीवनयापन कर रहे हैं।

अब अपनी सांस रोक लें। भारत में किसान मर रहे हैं, जबकि यूरोप में किसानों को 4000 रुपये प्रति हेक्टेयर प्रत्यक्ष अनुदान मिल रहा है। यह राशि भारत के किसानों की औसत आमदनी से

लगभग दोगुनी है। अगर 2,20,210 हेक्टेयर कृषि भूमि को 4,000 से गुना करें तो 90,40,210 करोड़ रुपये की भारी यूरोप के किसानों को मिल रही है। इसमें हैरानी नहीं है कि बहुत से यूरोपीय देशों में औसत कृषि आय शेष अर्थव्यवस्था के औसत से दो से तीन गुना अधिक है। मेरी समझ में नहीं आता है कि उत्तर भारत के कृषि क्षेत्रों के किसान नेता और राजनेता इसे राजनीतिक मुद्दा क्यों नहीं बनाते। आखिरकार, जब हजारों गन्ना किसान राजनेताओं के समर्थन पर नई दिल्ली को घेरकर अधिक गन्ना मूल्य की मांग मानने को बाध्य कर सकते हैं तो ये किसान संगठन और राजनेता अमेरिका और यूरोप के मारक अनुदान का मुद्दा उठाने और यह बताने में विफल क्यों हैं कि देश में कृषक समुदाय अस्तित्व के संकट से जूझ रहा है।

शिक्षाविद और नीति निर्माता भी गलत विश्लेषण के जिम्मेदार हैं। वे किसानों की हत्याओं से बचकर निकल जाते हैं क्योंकि कृषक संगठनों के पास दोषपूर्ण व्यापार समझौते के निहितार्थ समझने की क्षमता ही नहीं है। किसान नेताओं की इसमें दिलचस्पी नहीं है। उनकी मांगें भी आमतौर पर उनके राजनीतिक संसदीय क्षेत्र की आवश्यकताओं तक सीमित है क्योंकि इनमें से बहुत से किसान नेता सक्रिय राजनीति में जाने के इच्छुक है। यह इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि अगर विश्व व्यापार संगठन की दोहा विकास वार्ता 2010 तक पूरी हो जाती है तो भारत को अपने आयात शुल्कों को करीब–करीब शून्य तक घटाने को बाध्य किया जाएगा। इसका सबसे बड़ा नजला भारतीय किसानों पर पड़ेगा।

मुझे लगता है कि डब्ल्यूटीओ के खिलाफ आंदोलन कमजोर पड़ रहा है

और किसान संगठन थक गए हैं। जिस बात का एहसास नहीं हो रहा है वह यह कि द्विपक्षीय समझौतों के तहत आयात शुल्क में कटौती से देश में पहले ही आयात की बाढ़ आ गई है और इससे घरेलू कृषि और बागवानी क्षेत्र में हाहाकार मच गया है। चाय, काफी, नारियल, तिलहन कुछ ऐसी फसलें हैं जो सस्ते आयात से बुरी तरह प्रभावित हुई है। कपास का मामला ही लें। भारत ने 1997 से 2004 के बीच अमेरिका से काटन की 80 लाख गांठों का आयात किया था। इससे घरेलू बाजार में कपास की कीमतें गिर गई। परिणामस्वरूप पंजाब, हरियाणा और महाराष्ट्र के कपास किसानों को भारी घाटा उठाना पड़ा। 1995 से 2008 के बीच केवल विदर्भ क्षेत्र के 40 हजार किसानों ने आत्महत्या कर ली। इनमें से अधिकांश किसान कपास की खेती कर रहे थे। सस्ते आयात के कारण भारत में कपास की खेती घाटे का सौदा हो गई है।

भारत में किसान चिलचिलाती धूप में जानवरों की तरह काम करते हैं फिर भी एक माह में प्रति किसान परिवार 2400 रुपये से अधिक नहीं कमा पाता। एक साल में यह राशि मात्र 28 हजार रुपये बैठती है।

अब हमारी आंखें खुल जानी चाहिए। आखिरकार जब भारतीय किसानों को पैदावार बढ़ाने को कहा जाता है और कृषि वैज्ञानिक, कृषि उद्योग कंपनियां और सांसद भी इसी बात पर जोर देते हुए दिखते हैं तो मैं समझ नहीं पाता कि पैदावार बढ़ने से किसानों की आमदनी कैसे बढ़ जाएगी। मैंने वरिष्ठ वैज्ञानिकों और अर्थशास्त्रियों से बार–बार यह सवाल पूछा है। दुर्भाग्य से उनके पास इसका कोई जवाब नहीं है कि धनी देशों में कृषि संपदा का निर्धारण करने वाली राजनीतिक

अर्थव्यवस्था के पीछे क्या सोच है?

वे मानते हैं कि अमेरिका और यूरोप में किसान इसलिए अमीर है क्योंकि वहां पैदावार है। यह सफेद झूठ है। मेरी समझ से भारतीय किसानों की मुसीबत का यही प्रमुख कारण है। उन्हें यह विश्वास दिलाकर गुमराह किया जाता है कि उच्च पैदावार से अधिक आमदनी होती है। अगर यह सच होता तो अमेरिका और यूरोप के किसान, जिनकी पैदावार भारत की तुलना में लगभग दोगुनी है, को कृषि अनुदान की आवश्यकता नहीं पड़ती।

भारतीय किसान भी निश्चित तौर पर अपनी पैदावार दोगुनी कर सकते हैं। पर बड़ा सवाल यह है कि उन्हें जिंदा रहने और आर्थिक रूप से लाभकारी फसल उगाने के लिए अनुदान कौन देगा? अमेरिका में मात्र 20 हजार कपास किसानों को करीब 45 लाख करोड़ का सालाना अनुदान मिलता है। अमेरिका में काटन पट्टी में कृषि आमदनी उच्च पैदावार के कारण अधिक नहीं है, बल्कि साल दर साल मिलने वाले कृषि अनुदान के कारण वहां के किसान मालदार हैं। 2005 से पहले, काटन किसान हर साल प्रत्यक्ष सहायता के रूप में 90 लाख करोड़ रुपए प्राप्त कर रहे थे।

अमेरिका और यूरोप में किसान इसलिए बचे हुए हैं कि उन्हें विभिन्न मदों में भारी प्रत्यक्ष सहायता मिल रही है। वे फसल की कीमत से मालदार नहीं हो रहे हैं। अमेरिका और यूरोप जानते हैं कि घाटे की खेती की लागत पाटने के लिए अनुदान इन वस्तुओं के आयात पर खर्च होने वाली रकम से सस्ता है। इसके अलावा वे यह जोखिम इसलिए भी उठाते हैं कि खाद्य आत्मनिर्भरता किसी भी राष्ट्र की संप्रभुता के लिए बुनियादी रूप से जरूरी है। वास्तव में, वे इससे एक कदम आगे चल रहे हैं। अमेरिका और यूरोप पूरे विश्व का अन्नदाता बनने में पूरी ताकत झोंक रहे हैं। खाद्यान्न जरूरतों के लिए विश्व जितना अमेरिका और यूरोप पर निर्भर होगा, उतना ही अधिक इन देशों का विश्व पर राजनीतिक प्रभुत्व कायम होगा। ❑

सदस्यता सम्बन्धी सूचना

मान्यवर,,

स्वदेशी पत्रिका आज देश में चल रहे स्वदेशी आंदोलनों का स्थापित प्रतीक बन चुकी है। पिछले कई वर्षों से स्वदेशी पत्रिका ने असंगत एवं एकतरफा वैश्वीकरण, जनविरोधी आर्थिक उदारीकरण के विरोध एवं वैकल्पिक और रचनात्मक स्वदेशी आंदोलन के पक्ष में एक सक्रिय प्रहरी के नाते हमेशा आपको जागरूक बनाया है एवं आपसे संवाद स्थापित किया है। विगत कालखंड में इन सभी मुद्दों पर हमें आप जैसे सजग पाठकों का अपेक्षित सहयोग भी मिलता रहा है और भविष्य में भी मिलेगा ऐसा, विश्वास है।

आपसे आग्रह है कि स्वदेशी पत्रिका की आपकी सदस्यता अवधि यदि समाप्त हो गई हो तो कृपया पिछले समय से आगामी वर्ष तक की राशि धनादेश (मनीआर्डर), चेक एवं मांग पत्र (डिमांड ड्राफ्ट) के माध्यम से शीध्र भेजने की कृपा करें। पत्रिका के लिफाफे के उपर चिपकाए गए पते की प्रथम पंक्ति में सदस्यता अवधि अंकित है। आप अपनी सदस्यता राशि ''स्वदेशी पत्रिका'' के नाम पत्रिका के कार्यालय के पते पर भेज सकते हैं। सदस्यता अद्यतन न हो पाने की स्थिति में वित्तीय कारणों से पत्रिका आगे जारी रखना कठिन होगा।

सदस्यता शुल्क निम्न प्रकार है।

स्वदेशी पत्रिका	वार्षिक	आजीवन
हिन्दी	100/–	1000/–
अंग्रेजी	100/–	1000/–

हमें आपका सहयोग स्वदेशी आंदोलन को राष्ट्रव्यापी एवं जनोन्मुखी बनाने में प्रमुख भूमिका निभाएगा। कृपया स्वदेशी पत्रिका स्वयं भी पढ़ें एवं अन्य को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। पत्रिका के संबंध में अपना निष्पक्ष विचार हमें अवश्य भेजें।

पता : **स्वदेशी पत्रिका कार्यालय, 'धर्मक्षेत्र' शिव शक्ति मंदिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली–22**

भारतीय संस्कृति का आधुनिक महिला समाज

स्वतंत्रता एवं स्वच्छंता से परिपूर्ण होकर आधुनिक महिला समाज भारतीय संस्कृति को प्रदूषित कर रहा है। महिलाओं को स्वयं आत्मनियंत्रित होकर तर्क एवं बुद्धि के आधार पर परिवर्तनों को अपनाना चाहिए। महिलाओं के बौद्धिक विकास के लिए उनका शिक्षित होना अत्यंत आवश्यक है। महिलाओं को आधुनिक ही बनना है तो उन्हें अधिक से अधिक शिक्षा प्राप्त करना चाहिए। कला, साहित्य, परंपरा, संस्कार जैसे माध्यमों को सशक्त बनाकर ही हम अपनी वैश्विक संस्कृति की अस्मिता को बनाए रख सकते हैं।

■ डॉ. अनामिका पांडे

प्राचीन संस्कृति से सृजित भारतीय समाज में चहुंमुखी परिवर्तन हुए हैं। जैसे–जैसे हम 21वीं सदी में आगे बढ़ रहे हैं परिवर्तन भी तीव्रतर होता जा रहा है। महिलाओं को संस्कृति का रक्षक माना जाता है किंतु आधुनिकता को अपनाकर स्त्री चरित्र में जो परिवर्तन हुए हैं वे उनकी गरिमा में वृद्धि करने के स्थान पर कमी करने में अधिक सहायक सिद्ध हो रहे हैं।

भारतीय सामाजिक संगठन संस्कृति के वाहक माने जाते हैं। ये सामाजिक संगठन परिवार, वंश, कुल, गोत्र, नातेदारी समूहों एवं विभिन्न वर्गों से मिलकर बनते हैं। इनमें 'परिवार' समाज की वह केंद्रीय इकाई है जो विभिन्न समूहों से संबद्धता रखते हुए सामाजिक व्यवस्था को निर्मित करती हैं।

21वीं सदी के परिवर्तन के दौर में आधुनिक बनना और दिखना आधुनिक महिला समाज का महत्वपूर्ण उद्देश्य बनता जा रहा है। आधुनिकता महिलाओं का प्रभावित होना समाज की नींव के हिलने जैसा है क्योंकि वे ही संस्कृति की रक्षक मानी जाती है।

परिवार में स्त्री चरित्रों के माता, बहन, पत्नी व पुत्री के रूप में दर्शन होते हैं। महिला ही परिवार के बच्चों का पालन–पोषण करती है। इस कार्य के साथ–साथ वह परंपराओं, प्रथाओं और धार्मिक कार्यों को भी सतत् संपन्न करती है। इस प्रकार नई पीढ़ी करुणा, ममता, सहयोग, सहनशीलता, त्याग आदि से युक्त होती है। वे लोकाचार के माध्यम से नई पीढ़ी को संस्कारवान बनाती है।

आधुनिक समाज में पूरा सामाजिक परिवेश बदल रहा है। पाश्चात्य संस्कृति एवं समाज से प्रभावित होकर आधुनिक बनने के लिए सबसे पहले महिलाएं नवीनतम फैशन को अपनाती हैं। इसके लिए परिधानों में परिवर्तन होता है। महिलाएं अपने व्यक्तित्व एवं आयु को भी ध्यान में न रखकर सिर्फ आधुनिक दिखने के लिए फैशन के वस्त्रों को पहनती है। पश्चिमी फैशन के भ्रमजाल में फंसकर महिलाएं अपनी शालीनता एवं सौम्यता खोने लगी हैं।

नगरीय समाज हो या ग्रामीण सभी महिला समाजों में आधुनिक बनकर स्थापित होने की प्रतिस्पर्धा उपस्थित है। आधुनिकता

का अविवेकी अनुसरण संस्कृति की रचनात्मकता को समाप्त कर रहा है। आधुनिकता व्यक्तित्व का पतन कर रही है। बच्चों की नई पीढ़ी कुसंस्कारित हो रही है। नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। समाज में मर्यादाहीनता व्याप्त होने लगी है। सामाजिक संबंधों की प्रगाढ़ता नष्ट हो रही है। अनुशासनहीनता में वृद्धि हो रही है। इन सबके परिणामस्वरूप संपूर्ण भारतीय समाज संस्कारविहीन होने लगा है।

आधुनिक समाज में पूरा सामाजिक परिवेश बदल रहा है। पाश्चात्य संस्कृति एवं समाज से प्रभावित होकर आधुनिक बनने के लिए सबसे पहले महिलाएं नवीनतम फैशन को अपनाती हैं। इसके लिए परिधानों में परिवर्तन होता है। महिलाएं अपने व्यक्तित्व एवं आयु को भी ध्यान में न रखकर सिर्फ आधुनिक दिखने के लिए फैशन के वस्त्रों को पहनती है। पश्चिमी फैशन के भ्रमजाल में फंसकर महिलाएं अपनी शालीनता एवं सौम्यता खोने लगी हैं।

महिलाएं विदेशी भाषा बोलकर, विदेशी मानवीय व्यवहारों को अपनाकर आधुनिक बनने का प्रयास करती है। पाश्चात्य राष्ट्रों का आकर्षण महिलाओं को जीवन मूल्यों से दूर करता जा रहा है। जिससे सामाजिक संबंधों में स्थायित्व प्रभावित हो रहा है।

महिलाएं प्रायः उच्च आर्थिक वर्ग की जीवनशैली से प्रभावित होकर अनावश्यक व्यय करके परिवार पर अतिरिक्त आर्थिक बोझ डालती हैं। आधुनिकता भोगवाद को बढ़ावा देती है। जिससे आर्थिक हानि तो होती ही है साथ ही मानसिक मूल्यों में भी कमी होती है। मनोचिकित्सकों के अनुसार इन मूल्यों की क्षतिपूर्ति हमेशा असंभव होती है।

महिलाएं विदेशी भाषा बोलकर, विदेशी मानवीय व्यवहारों को अपनाकर आधुनिक बनने का प्रयास करती है। इन सबसे वे संचार माध्यमों से अवगत होती है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की विदेशी संस्कृति समाज की नई पीढ़ी को मानसिक रूप से गुलाम बना रही है। पाश्चात्य राष्ट्रों का आकर्षण महिलाओं को जीवन मूल्यों से दूर करता जा रहा है। जिससे सामाजिक संबंधों में स्थायित्व प्रभावित हो रहा है। रिश्तों में औपचारिकता का समावेश होता जा रहा है। सांस्कृतिक मूल्यों एवं परंपराओं का पालन करने वाली महिला को पुराने जमाने की नासमझ गंवार की श्रेणी में रखा जाता है। इस प्रकार का नैतिक पतन भारतीय संस्कृति का अवमूल्यन कर रहा है।

स्वतंत्रता एवं स्वच्छंता से परिपूर्ण होकर आधुनिक महिला समाज भारतीय संस्कृति को प्रदूषित कर रहा है। महिलाओं को स्वयं आत्मनियंत्रित होकर तर्क एवं बुद्धि के आधार पर परिवर्तनों को अपनाना चाहिए। महिलाओं के बौद्धिक विकास के लिए उनका शिक्षित होना अत्यंत आवश्यक है। महिलाओं को आधुनिक ही बनना है तो उन्हें अधिक से अधिक शिक्षा प्राप्त करना चाहिए। कला, साहित्य, परंपरा, संस्कार जैसे माध्यमों को सशक्त बनाकर ही हम अपनी वैश्विक संस्कृति की अस्मिता को बनाए रख सकते हैं। ❑

:: सूचना ::

स्वदेशी पत्रिका सम्राज्यवाद के खिलाफ एक सशक्त आवाज है। पत्रिका को ऐसे लोगों से प्रतिक्रियाएं, रिपोर्ट या आलेख की अपेक्षा है, जो राष्ट्रहित में सोचते हैं और देश के स्वावलम्बन के लिए कुछ करने की इच्छा रखते है। जरूरी नहीं कि आप पत्रकार या लेखक ही हों, अपने आसपास से जुड़ी चीजों के प्रति आपकी संवदेना है और आप शब्दों में उसे लिख सकते है तो हमें अवश्य लिख भेजें। साथ ही स्वदेशी पत्रिका में छपे लेख आपको कैसे लगते हैं, क्या आप इसमें कुछ नए विषयों का समायोजन चाहते है कृपया हमें अवश्य अवगत कराएं। आपके विचारों को हम प्राथमिकता के साथ प्रकाशित करने का भी प्रयास करेंगे।

हमारा पता है :–

संपादक

स्वदेशी पत्रिका

'धर्मक्षेत्र', सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

भारत पर चीन का दबाव

चीन बहुत चालाक देश है। अब वह नेपाल की राजनीति पर हावी हो गया है। नेपाल के बाजारों में पहले भारत का वर्चस्व था। परंतु चीन के सस्ता माल के सामने भारत की एक नहीं चली। नेपाल के माओवादियों का संरक्षक चीन है। वह भारत में भी माओवादियों को बढ़ावा देता है। देश के कुछ प्रमुख नेता माओवादियों के हिंसा का समर्थन चीन के इशारे पर करते हैं। चीन में हिंसा का कोई स्थान नहीं है। जबकि भारत में माओवादी, नक्सलवादी, आतंकवादी लगातार लोगों की हत्या कर रहे हैं।

■ उमेश प्रसाद सिंह

भारत सरकार चीन पर बहुत अधिक मेहरबान है। हमारे मंत्री लगातार चीन की यात्रा पर जा रहे हैं और चीन कुटिल मुस्कान के साथ इनका स्वागत कर रहा है। पिछले तीन माह में चीन में सरकारी दौरे पर जाने वालों में पहला नाम विदेश मंत्री एस.एम. कृष्णा का है उनके साथ विदेश सचिव निरूपमा राव भी गई। एक माह बाद पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश गए। इन सभी नेताओं को चीन ने अपने अनुकूल प्रयोग किया।

विदेश मंत्री ने अपनी यात्रा में सीमा विवाद पर कोई चर्चा नहीं की लेकिन उन्होंने चीन की धर्मनिरपेक्षता और बंधुत्व की भावना की जमकर तारीफ की। उन्होंने चीन से पत्राचार और टेलीफोन सेवाएं आरंभ करने का सुझाव दिया। इसे चीन ने तुरंत स्वीकार कर लिया। विदेश मंत्री द्वारा दिए गए रचनात्मक सुझाव पर खुशी प्रकट किया।

विदेश मंत्री ने भारत आकर घोषणा किया कि चीन ब्रह्मपुत्र नदी को बांध रहा है। पिछले छह माह से वे बांध से इंकार करते रहे थे। पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश ने तो बीजिंग से ही भारतीय गृह मंत्रालय को फटकार लगाया।

रमेश जी की अटूट भक्ति को देख राजधानी में यह चर्चा होने लगी जयराम

हमारे मंत्रियों को यह नहीं भूलना चाहिए चीन हमेशा सीमा विवाद को बढ़ावा देता है। भारतीय राज्यों को अपना राज्य बताता है। हमारी जमीन पर कब्जा करके बैठा है। ऊपर से देखने पर ऐसा लगता है कि चीन भारत से संबंध सुधारना चाहता है। गहराई से देखा जाए तो चीन 45,700 कि.मी. की लम्बी सीमा लाइन को वह बार–बार उल्लंन करता है। जब भी चाहता है भारतीय सीमा के काफी अंदर की बस्तियों तक आ जाता है और जब चाहता है वापस चला जाता है।

रमेश को राज्यसभा की सदस्यता कहां से दिलाई जाएगी आंध्र प्रदेश से या बीजिंग से। हमारे मंत्रियों को यह नहीं भूलना चाहिए चीन हमेशा सीमा विवाद को बढ़ावा देता है। भारतीय राज्यों को अपना राज्य बताता है। हमारी जमीन पर कब्जा करके बैठा है। ऊपर से देखने पर ऐसा लगता है कि चीन भारत से संबंध सुधारना चाहता है। गहराई से देखा जाए तो चीन 45,700 कि.मी. की लम्बी सीमा लाइन को

वह बार–बार उल्लंन करता है। जब भी चाहता है भारतीय सीमा के काफी अंदर की बस्तियों तक आ जाता है और जब चाहता है वापस चला जाता है। अनेक बार चीनी फौजें अपनी गाड़ियों में बैठकर भारत के अहम ठिकानों पर पहुंच जाती हैं। चीनी जवान भारी मात्रा में साजो–सामान के साथ हमारी सीमा में आते हैं। वे आम लोगों से दोस्ताना संबंध जोड़ते हैं और कई बार मारपीट भी करते हैं। पता नहीं चीन कब दिखावे का हस्तक्षेप करते हुए करते हुए कभी सचमुच कब्जा कर ले।

आज की स्थिति ठीक उसी प्रकार करवट ले रही है जिस प्रकार छठे दशक में। सन् 1961 में भारत में नियुक्त अमेरिकी राजदूत जौन कैनेथ गाल्ब्रेथ ने एक पुस्तक 'अम्बेसडर डायरी' की नाम से लिखी। इस पुस्तक में तत्कालीन रक्षामंत्री कृष्ण मेनन की भूमिका का उल्लेख है। गाल्ब्रेथ ने लिखा है कि 'उन्होंने कृष्ण मेनन को तमाम सबूत दिए कि चीनी सेना भारतीय क्षेत्र में घुस आई है। चीनी सेना ने तमाम भारतीय सुरक्षाकर्मियों एवं इंटेलीजेंस अधिकारियों को मार डाला है। किंतु कृष्ण मेनन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उन्होंने गाल्ब्रेथ से कहा कि 'अमेरिका तो भारत–चीन मैत्री का दुश्मन है इसलिए वह दोनों के बीच गलतफहमी पैदा कर रहा है।' मतलब यह कि भारतीय सुरक्षा हितों के प्रति लापरवाही का आलम यह था कि हमारे रक्षामंत्री ही चीन के वकील बन चुके थे।

ठीक यही हालात आज मनमोहन सिंह मंत्रिमंडल के सदस्य जयराम रमेश की है। वे भी गृहमंत्रालय की चिंता को निरर्थक बताकर चीन की जेडटीई टेलीकॉम कंपनी को देश में उत्पादन करने की अनुमति दिलाने पर आमादा हैं। भारतीय खुफिया तंत्र बिल्कुल नहीं चाहती कि भारत सरकार चीन की इन टेलीकॉम कंपनियों को उत्पादन की अनुमति दे जो हमारी सुरक्षा को तहस–नहस करने के लिए टेलीकॉम उपकरणों के साथ खुफिया चिप्स का भी उत्पादन करे।

आज की स्थिति ठीक उसी प्रकार करवट ले रही है जिस प्रकार छठे दशक में। सन् 1961 में भारत में नियुक्त अमेरिकी राजदूत जौन कैनेथ गाल्ब्रेथ ने एक पुस्तक 'अम्बेसडर डायरी' की नाम से लिखी। इस पुस्तक में तत्कालीन रक्षामंत्री कृष्ण मेनन की भूमिका का उल्लेख है। गाल्ब्रेथ ने लिखा है कि 'उन्होंने कृष्ण मेनन को तमाम सबूत दिए कि चीनी सेना भारतीय क्षेत्र में घुस आई है। चीनी सेना ने तमाम भारतीय सुरक्षाकर्मियों एवं इंटेलीजेंस अधिकारियों को मार डाला है। किंतु कृष्ण मेनन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

चीन बहुत चालाक देश है। अब वह नेपाल की राजनीति पर हावी हो गया है। नेपाल के बाजारों में पहले भारत का वर्चस्व था। परंतु चीन के सस्ता माल के सामने भारत की एक नहीं चली। नेपाल के माओवादियों का संरक्षक चीन है। वह भारत में भी माओवादियों को बढ़ावा देता है। देश के कुछ प्रमुख नेता माओवादियों के हिंसा का समर्थन चीन के इशारे पर करते हैं। चीन में हिंसा का कोई स्थान नहीं है। जबकि भारत में माओवादी, नक्सलवादी, आतंकवादी लगातार लोगों की हत्या कर रहे हैं।

चीन ने जनसंख्या पर नियंत्रण कर लिया है। वहां किसी भी दंपत्ति को सिर्फ एक बच्चा पैदा करने का अधिकार है परंतु भारत में वोट बैंक के अनुसार परिवार नियोजन का अधिकार है। कोई तो 20 बच्चा पैदा करें और अन्य को परिवार नियोजन की सलाह दी जाती है। दुरूस्थ शासन व्यवस्था और सकारात्मक परिवार नियोजन के मामले में ही हमें चीन की नकल करना चाहिए। ❑

सबसे बड़ा रुपैया

विद्वान कहते हैं कि भगवान की लाठी बिना आवाज किए अन्यायी को मारती है। मेरा तो यह विश्वास ही बन गया है कि सत्तापति की लाठी भी कुछ कम नहीं। अंतर इतना ही है कि वह अकसर न्याय मांगने वालों पर ही बरसती है। सत्ता के हानि–लाभ का गणित ही उसकी न्याय कसौटी है। मान लीजिए, कोई अनाज का व्यापार है। भैंसपति के संकेतों को नहीं समझता या उसके अनुसार नाचना नहीं चाहता। बस भैंस–स्वामी का संकेत मिलते ही कुछ घंटों में उसके गोदाम सील हो जाएंगे।

■ **लक्ष्मीकांता चावला**

स्कूल में हिंदी के आचार्य ने हमें पढ़ाया था कि जिसकी लाठी उसकी भैंस। किसी जमाने में यह सच होता होगा, पर बदलते समय के साथ बहुत कुछ बदल गया है। कभी लाठी के बल पर भैंस छीनते होंगे, किंतु आज भैंसपति बनने के लिए किस्मत के साथ–साथ छल–बल, नोट, शराब, झूठ–फरेब बहुत कुछ चाहिए। बस एक बार भैंस हाथ में आ गई तो फिर सभी लाठियां उसी के संकेत पर बरसती हैं, जिसे भैंस मिल गई हो। किसी समय यह आदर्श वाक्य पढ़ाया जाता था कि धन गया तो कुछ नहीं गया, स्वास्थ्य गया तो कुछ गया, पर जिसका चरित्र गया उसका सबकुछ नष्ट हो गया।

21वीं सदी का सत्य यह बन गया है कि चरित्र गया तो कुछ नहीं गया, स्वास्थ्य गया तो कुछ गया, लेकिन धन चला गया तो सब कुछ चला गया। मुझे तो लगता है कि कमोबेश हर युग का सत्य यही रहा है। भर्तृहरि महाराज ने हजारों वर्ष पूर्व घोषणा कर दी थी कि धनवान ही बलवाल है, पंडित है और संसार के सभी गुण सोने में ही स्वीकार किए गए हैं।

प्रसिद्ध सूक्ति है कि बाप बड़ा न भैया सबसे बड़ा रुपैया। चरित्र की हानि कोई हानि नहीं के सिद्धांत में विश्वास रखने वाले जानते है कि थोड़ा चरित्र खो जाने से ज्यादा इज्जत नहीं मिलती। जिन्होंने अरबों–खरबों के घोटाले किए हैं, जीवन की नैतिकता से तिनका पूरी तरह तोड़ दिया है, उन्हीं के दर्शन पाने के लिए दूरदर्शन और समाचार पत्रों के फोटोग्राफर पीछे–पीछे भागते हैं। वे राष्ट्रीय समाचारों में छाए रहते हैं, विधानसभाओं और संसद में उन्हीं का दबदबा है। जेल में जाएं तो उनके तेज से जेल पांच तारा होटल बन जाती है। उनके मान–सम्मान का ध्यान रखते हुए सरकारी विश्रामगृहों को ही उनके लिए जेल बना दिया जाता है और चरित्र को खोने वाले ऐसे महान व्यक्ति सरकारी मेहमानवाजी का सुख भोगते हैं।

जिन्होंने अरबों–खरबों के घोटाले किए हैं, जीवन की नैतिकता से तिनका पूरी तरह तोड़ दिया है, उन्हीं के दर्शन पाने के लिए दूरदर्शन और समाचार पत्रों के फोटोग्राफर पीछे–पीछे भागते हैं। वे राष्ट्रीय समाचारों में छाए रहते हैं, विधानसभाओं और संसद में उन्हीं का दबदबा है।

आईबी या सीबीआई की जांच उनकी इज्जत को चार चांद लगा देती है।

अब तो सारी दुनिया जान गई है कि सत्ता नाम की भैंस पर अधिकार हो जाए तो फिर सभी लाठियां भैंसपति की हो जाती है। उसके संकेत मात्र से चलती और बरसती भी हैं, लूटती और पीटती भी है। मानवाधिकारों के हनन, अत्याचार और जोर–जबरदस्ती के आरोप उन्हीं पर लगते हैं,जिनके हाथ में लाठी है, लेकिन भैंस अथवा सत्तापति अभिनंदन समारोहों का नायक बना रहता है। फूल–मालाओं से लादा जाता है तथा लाठियों के दुरुपयोग पर भाषण भी झाड़ता है।

विद्वान कहते हैं कि भगवान की लाठी बिना आवाज किए अन्यायी को मारती है। मेरा तो यह विश्वास ही बन गया है कि सत्तापति की लाठी भी कुछ कम नहीं। अंतर इतना ही है कि वह अकसर न्याय मांगने वालों पर ही बरसती है। सत्ता के हानि–लाभ का गणित ही उसकी न्याय कसौटी है। मान लीजिए, कोई अनाज का व्यापार है। भैंसपति के संकेतों को नहीं समझता या उसके अनुसार नाचना नहीं चाहता। बस भैंस–स्वामी का संकेत मिलते ही कुछ घंटों में उसके गोदाम सील हो जाएंगे। कनक या चावल सरकारी गोदामों में भेजने के लिए मिल रही रेलगाड़ियां रुक जाएंगी। आयकर अधिकारियों का जमघट भी लग सकता है। समझदार व्यक्ति व्यक्ति इस संकट से बचने के लिए सत्तारूपी भैंस के मालिक की शरण में जाकर पश्चाताप करता है, भेंट चढ़ाता है और व्यावसायिक मुस्कान का मुखौटा चढ़ाकर उसी धुन पर नाचता है जो सत्तापति के संकेतों से बजती है।

भैंस पर कब्जा हो जाने का सबसे बड़ा लाभ तो यह है कि भैंसपति के पुत्र और पोते भी सत्ता का सुख भोगते हैं। वे सर्वगुण संपन्न हों, न हों पर दिखाई देते है। उनमें विधायक, मंत्री, सांसद और प्रधानमंत्री तक बनने के गुण सभी को दिखाई देने लगते हैं। आज तो पूरे देश में इन्हीं का गुणगान हो रहा है।

हर समझदार व्यक्ति भैंस–स्वामी से घबराता है, क्योंकि वह सत्ता की लाठियों से उद्योगपति को बिजली चोर बना सकता है। पेट्रोल पंप के तेल को मिलावटी सिद्ध करने की शक्ति रखता है। बिक्री कर को चोरी सिद्ध कर सकता है। ईमानदार अफसर को गबन में फंसा सकता है।

भैंस पर कब्जा हो जाने का सबसे बड़ा लाभ तो यह है कि भैंसपति के पुत्र और पोते भी सत्ता का सुख भोगते हैं। वे सर्वगुण संपन्न हों, न हों पर दिखाई देते है। उनमें विधायक, मंत्री, सांसद और प्रधानमंत्री तक बनने के गुण सभी को दिखाई देने लगते हैं। आज तो पूरे देश में इन्हीं का गुणगान हो रहा है। इसलिए यह मानना ही पड़ेगा कि लाठी के बल पर भैंस पर कब्जा जमाने का युग बीत गया है। उस खेल में हड्डी–पसली टूटने का खतरा भी रहता है। अतः साम–दाम या दंड–भेद से भैंस पर अधिकार करना चाहिए, तब लाठियां स्वयं ही आपकी सेवा में हाजिर हो जाएंगी। ❑

MOHINI FURNITURE
&
INTERIOR HOUSE
C-212, L.I.G. Flats,
East of Loni Road, Shahadra
Delhi - 110 032
Prop.: Manish Khandelwal
9312581072

मुद्दा

देश के वर्तमान हालात

भारत को आज अदब, शालीन, भद्र समाजयुक्त सोच वाले राजनीतिज्ञों की परम आवश्यकता है। विचारों की राजनीति तो सदैव चलेगी लेकिन कुछ राष्ट्रीय मामले हैं जिन पर राजनीति नहीं बल्कि सर्वसम्मत नीति बननी चाहिए। भारत की असफलता या बदनामी किसी पार्टी विशेष की असफलता – बदनामी नहीं मानी जाएगी बल्कि भारत की भूमि से जुड़े प्रत्येक भारतीयों की उपेक्षा मानी जाएगी।

■ प्रभात झा

इनकम टैक्स आयकर विभाग का काम है जो टैक्स कम दे, उसे पकड़ना और टैक्स की वसूली करना, पर देखिए नियति का खेल भ्रष्टाचार में आयकर के बड़े से बड़े अधिकारी स्वयं पकड़े जा रहे हैं। सीबीआई का काम है छापा मारना, जांच करना, पर अनेकों सीबीआई अधिकारी स्वयं जांच और छापे के घेरे में हैं। पुलिस का थोड़ा बहुत गलती करना समझ में आता है पर सीआरपीएफ के जवान कारतूस, बम नक्सलियों को सप्लाई करने लगे हैं, ऐसे में नक्सलियों से प्रभावित करोड़ों लोगों की हिफाजत कौन करेगा?

भारत अनाथ होता दिख रहा है। लगता है जिनके रक्त में भारतीयता का उबाल होना चाहिए था, उनकी धमनियों और शिराओं के रक्त भ्रष्टाचार युक्त हो गए हैं। भ्रष्ट रक्त से उत्कृष्ट कर्म नहीं हो सकते। कर्म पावनता चाहता है। कर्म भावना चाहता है। कर्म धर्म चाहता है। कर्म में समाज का मर्म होना चाहिए। कर्म में परोपकार भी होना चाहिए। कर्म विकार से दूर होना चाहिए। कर्म में सामाजिक सरोकार होना चाहिए। गत डेढ़–दो महीने में ऐसा लग रहा है जैसे हम सब कुछ खोते जा रहे हैं।

इनकम टैक्स आयकर विभाग का काम है जो टैक्स कम दे, उसे पकड़ना और टैक्स की वसूली करना, पर देखिए नियति का खेल भ्रष्टाचार में आयकर के बड़े से बड़े अधिकारी स्वयं पकड़े जा रहे हैं। सीबीआई का काम है छापा मारना, जांच करना, पर अनेकों सीबीआई अधिकारी स्वयं जांच और छापे के घेरे में हैं। पुलिस का थोड़ा बहुत गलती करना समझ में आता है पर सीआरपीएफ के जवान कारतूस, बम नक्सलियों को सप्लाई करने लगे हैं, ऐसे में नक्सलियों से प्रभावित करोड़ों लोगों की हिफाजत कौन करेगा? एमसीआई के चेयरमैन केतन देसाई यदि कसाई हो जाएं और छापा पड़ने पर उनके घर से डेढ़ सौ किलो सोना, 180 करोड़ रूपए नकद प्राप्त हों फिर कौन हिफाजत करेगा आम भारतीयों की? केतन देसाई मेडिकल कॉलेज खोलने के नाम पर प्रबंधकों से करोड़ों वसूलते हैं। प्रबंधक छात्रों से वसूलते हैं। इसलिए गत 6–7 वर्षों में चिकित्सा महाविद्यालयों में डाक्टर कम केतन कसाई अधिक पैदा हो रहे हैं।

पाक स्थित भारतीय उच्चायुक्त की महिला यदि इस्लाम कबूल कर हिन्दुस्तान

की बोली लगाए और भारत के बजाय पाकिस्तान के लिए काम करने लगे तो भला हमारा कौन माई–बाप होगा? भारत के गृह मंत्रालय के संयुक्त सचिव और कुछ अधिकारियों के घर ही नहीं, बल्कि राज्यों में आईएएस और आईपीएस के रूप में तैनात नौकरशाहों के घर में भी अरबों–खरबों रूपए मिलने लगे हैं तो भला भारत के तिरंगे की हिफाजत कौन करेगा?

यूपीए सरकार के मंत्रिमंडल के सदस्य यदि आईपीएल की आड़ में सट्टाबाजार का कारोबार करने लगे और अपनी प्रेमिका के लिए ली गई संवैधानिक शपथ से खिलवाड़ करने लगे तो भला भारत मां के आंसू कौन पोछेगा? पाक अधिकृत कश्मीर का व्यक्ति अमेरिकन नागरिक बनकर भारत के रक्षा संस्थान (आईडीएसए), जहां पर रक्षा सामग्रियों का विश्लेषण और अनुसंधान होता है, के लिए शोध के लिए आये और वीजा खत्म होने के बाद न जाय तो इसे हम क्या कहेंगे, भारत की कमजोरी या मजबूरी?

नकली नोटों के व्यापार ने स्थिति इतनी बदतर कर दी है कि विदेशों में भारतीय करेंसी छप रही है। हेडली दहाड़ रहा है, कसाब हर भारतीय को कसक दे रहा है। अफजल उच्चतम न्यायालय के आदेश के बाद भी हर भारतीय को मुंह चिढ़ा रहा है। पर सरकार की प्राथमिकता अपने विरोधियों के टेलीफोन टेप करना हो गई है।

दिक्कत यह है कि आज जो देश चला रहे हैं उनमें विदेशी होने के नाते स्वदेशी का अभाव है। इधर हमारे प्रधानमंत्री करेंसी की चिंता तो समझते हैं लेकिन 'कंट्री' नहीं समझते। इसमें दोष सिर्फ उनका ही नहीं, उनका भी है जिन्हें संविधान ने मत देने का अधिकार दिया है।

भारतीय राजनीति हताशा ही नहीं बल्कि बहुत नाजुक दौर से गुजर रही है। भारतीय राजनीति की दशा और दिशा बदलने का समय आ चुका है। यह कार्य बातों से नहीं होगा। प्रकृति का एक नियम है। जब तक हम वजन तौलने की मशीन में उसके द्वारा मांगी जाने वाली राशि का सिक्का नहीं डालते हैं तो वजन का टिकट बाहर नहीं निकलता है। बिना समर्पण और त्याग के हम राजनीतिक दशा और दिशा नहीं बदल सकते।

भारतीय राजनीति हताशा ही नहीं बल्कि बहुत नाजुक दौर से गुजर रही है। भारतीय राजनीति की दशा और दिशा बदलने का समय आ चुका है। यह कार्य बातों से नहीं होगा। प्रकृति का एक नियम है। जब तक हम वजन तौलने की मशीन में उसके द्वारा मांगी जाने वाली राशि का सिक्का नहीं डालते हैं तो वजन का टिकट बाहर नहीं निकलता है। बिना समर्पण और त्याग के हम राजनीतिक दशा और दिशा नहीं बदल सकते। समर्पण और त्याग विचार तो है ही परन्तु इसका महत्व तब तक नहीं है जब तक यह स्वयं के आचरण में न आ पाए।

भारत को आज अदब, शालीन, भद्र समाजयुक्त सोच वाले राजनीतिज्ञों की परम आवश्यकता है। विचारों की राजनीति तो सदैव चलेगी लेकिन कुछ राष्ट्रीय मामले हैं जिन पर राजनीति नहीं बल्कि सर्वसम्मत नीति बननी चाहिए। भारत की असफलता या बदनामी किसी पार्टी विशेष की असफलता – बदनामी नहीं मानी जाएगी बल्कि भारत की भूमि से जुड़े प्रत्येक भारतीयों की उपेक्षा मानी जाएगी। कभी–कभी लगता है भारत विकृत युक्त संस्कृति से गुजर रहा है। अन्यथा पिता का बेटी से बलात्कार, मामा से भांजी का बलात्कार, सामूहिक हत्याओं का दौर, एक साथ चार बच्चों की हत्या कर स्वयं मर जाना, ऐसी एक नहीं, अनेक घटनाएं निरंतर घट रही हैं। पर स्थिति ऐसी निर्मित हो चुकी है कि इन पीड़ाओं के प्रति सरकार को संवेदनशील होना चाहिए, लेकिन समाज क्यों इतना असंवेदनशील होता जा रहा है? यह बात समझ से परे है।

आजादी के पहले हर भारतीय राष्ट्रीयता से ओत–प्रोत था, आजादी के बाद राष्ट्रीयता का रक्त कमोबेश सभी में शिथिल क्यों होता जा रहा है? उन कारणों को ढूंढना होगा। दलगत राजनीति जनमत के लिए है, पर जनमत तो राष्ट्र के लिए होना चाहिए क्योंकि इस यथार्थ से कोई इनकार नहीं कर सकता कि भारत रहेगा तो हम रहेंगे।

जहां सामूहिकता की आवश्यकता है वहां सामूहिकता पूरे देश में दिखनी चाहिए। जहां विचार की आवश्यकता है वहां वैचारिक प्रबलता भी दिखनी चाहिए। देश को उदासीनता से बाहर निकालना होगा और यह तभी निकलेगा जब हमारा राष्ट्रीय और नागरिक बोध जागेगा। ❑

वैश्विक आर्थिक मंदी

भारतीय अर्थव्यवस्था पर इसका प्रभाव

भारत का सबसे ज्यादा प्रभावित होने वाला क्षेत्र सूचना–तकनीकी क्षेत्र रहा। आईटी क्षेत्र का अधिकांश निर्यात अमेरिका को होने के कारण इस क्षेत्र के निर्यात में कमी हुई। इस कारण एक तरफ जहां आईटी सेक्टर में रोजगार में कमी हुई वहीं दूसरी तरफ भारत का भुगतान संतुलन पर विपरीत प्रभाव पडा।

■ डॉ. करुणा शंकर कनौजिया

वर्तमान वैश्विक एवं भौगोलिक परिदृश्य में यह तय है कि विश्व के किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में होने वाले परिवर्तन का प्रभाव अन्य देशों की अर्थव्यवस्था पर अवश्य पडेगा। क्योंकि विश्व व्यापार में सभी की भागीदारी होती है। लेकिन प्रभाव कि मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि एक देश अन्य देश से किस स्तर का व्यापारिक साझीदार है। सितम्बर, 2008 में अमेरिका में आयी मंदी अकेले अमेरिकी की मंदी नहीं रही बल्कि, वैश्विक संकट का रूप धारण कर चुकी है। इसका मुख्य कारण अमेरिकी अर्थव्यवस्था का विश्व की बडी अर्थव्यवस्थाओं में से एक होना, विश्व व्यापार में इसका प्रमुख साझीदार होना एवं लगभग विश्व के सभी देशों के साथ इसकी व्यापारिक साझेदारी होना है। भारतीय अर्थव्यवस्था भी इससे अप्रभावित नहीं रही क्योंकि, अमेरिका भारत का प्रमुख व्यापारिक साझेदार है।

हालांकि इस मंदी का असर भारतीय अर्थव्यवस्था पर बहुत नहीं पड़ा क्योंकि जिन कारणों से यह मंदी आयी, उन कारणों में जैसे बैंकिंग आधारित संरचना एवं ढांचागत तथ्यों आदि में बहुत अन्तर है। इसका त्वरित प्रभाव भारतीय संवेदी सूचकांक पर पड़ा जो कभी लगभग 21,000 अंक पार पहुंच चुका था वह नीचे गिरकर 10000 के आसपास आ गया। इसका प्रभाव भारतीय विदेशी व्यापार पर भी पडा।

आर्थिक मंदी : आर्थिक मंदी एक

ऐसी स्थिति है जिसमें किसी देश का सकल घरेलू उत्पाद लगभग 6 माह नकारात्मक वृद्धि को दर्शाता है। जब गिरावट कई महिने लगातार बनी रहती है तो यह आर्थिक संकट का रूप ले लेती है। इस स्थिति में कई आर्थिक गतिविधियां जैसे – बेरोजगारी, निवेश, उपभोग, निगमीय लाभ आदि नकारात्मक होने लगती हैं। इस प्रकार आर्थिक संकट की स्थिति में मांग में कमी आती है अथवा तेजी से मूल्य बढ़ती है अथवा मूल्यों में वृद्धि एवं अर्थव्यवस्था में गतिहीनता दोनों साथ–साथ आते हैं। हाल में आयी मंदी की स्थिति कुछ ऐसी ही थी।

मंदी का कारण : अगर हम सबप्राइम उधारी की बात करें तो यह मुख्यता प्राइम उधारी के ठीक विपरीति की स्थिति है। इसके अंतर्गत वित्तीय संस्थान उधार लेने वाले व्यक्ति को बिना उसके भुगतान करने के इतिहास की स्थिति देखें ऋण प्रदान करते हैं। आम भाषा में इसे द्वार पर जाकर दी गयी उधारी कहा जाता है। ऋण न अदा करने की स्थिति में उसके स्वयं के घर से संचयन किया जाता है। बैंक और अन्य वित्तीय संस्थान इसी प्रकार के दिए गए ऋण का संचालन एवं संकलन करने में असफल रहे, जिससे तरलता का संकट उत्पन्न हो गया।

संयुक्त राज्य अमेरिका में वित्तीय कंपनियों ने इसी प्रकार के ऋण अधिक मात्रा में वितरित किये और ऐसे ग्राहकों को ऋण वितरित किए, जिनकी आय पर्याप्त नहीं थी। उन्हें सिर्फ प्रोपर्टी की सुरक्षा पर ऋण दिये गये। बाद में इस प्रकार का ऋण लेने वाले ग्राहक उसे वापस करने में विफल रहे। साथ ही दूसरी तरफ प्रोपर्टी

की खरीददारी मांग में कमी के चलते उनकी कीमतों में भी गिरावट आयी। वर्तमान मंदी का मुख्य कारण यही सब प्राइम उधारी ही है।

भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव : यह तो तय है कि विश्व में किसी भी प्रकार की आर्थिक घटना का प्रभाव अन्य देशों पर पड़ना स्वाभाविक है। यह प्रभाव प्रत्यक्ष हो अथवा अप्रत्यक्ष। 2008 के अंतिम महीनों में आयी अमेरिकी मंदी का असर भारत पर अप्रत्यक्ष रूप से अधिक पड़ा अर्थात् भारत वर्तमान आर्थिक संकट से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित नहीं है। इसका मुख्य कारण भारत द्वारा अपनायी जा रही अविभक्त उधारी एवं साउंड बैंकिंग के तरीके रहे हैं जिसने ऋण लने वालों को हतोत्साहित किया।

भारत के केंद्रीय बैंक, भारतीय रिजर्व बैंक के दिशा–निर्देशों के अनुसार भारतीय बैंकों ने नकद आरक्षित अनुपात (सीआरआर) और संवैधानिक तरलता अनुपात (एसएलआर) को बनाये रखा। इसके साथ ही केंद्रीय बैंक ने भारतीय बैंकों को निर्देशित किया है कि भारतीय बैंकों का अमेरिकी मोर्टगेज बाजार में सीमित प्रदर्शन रहे। अन्यथा भारतीय वित्तीय संस्थान या तो संकट में फंस गये होते अथवा असफल हो गये होते। भारतीय रिजर्व बैंक के अनुसार, इसलिए इनके संतुलन पर सीमित असर पड़ेगा। स्थिति इससे और अधिक बदतर होती यदि बैंकों ने गैर वित्तीय परिसंपत्तियों में निवेश किया होता।

सबप्राइम संकट से भारत के बचे रहने का कारण यह भी रहा कि भारत में ऋण लेना अच्छा नहीं माना जाता है। यहां काफी सोच–समझ कर ऋण लिया जाता है। वास्तव भारतीय बैंकों की समस्या सबप्राइम की नहीं रही, बल्कि खुदरा कर्ज की रही। बैंकों को इससे बचने की आवश्यकता है। भारतीय बैंकों को खुदरा ऋण प्रदान करते समय सभी प्रकार के जोखिमों को ध्यान में रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त भारत में प्रतिभूतिकरण एवं स्ट्रक्चर्ड प्रोडक्ट मार्केट अभी शुरूआती चरण में हैं। इस प्रकार भारत पर इस मंदी का असर कम पड़ने के अन्य कई कारण हैं जैसे–

- व्युत्तपन्न बाजार (डेरिवेटिव बाजार) सेबी की सख्त निगरानी की वजह से बचा है। डेरिवेटिव बाजार एक वित्तीय हथियार है जो ऋणों से संबंधित जोखिम को बढ़ा सकता था।
- भारतीय कंपनियों को नीतिगत निवेश ही बाहर कर सकने की अधिक छूट थी।
- भारत ने प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को आकर्षित करने वाली नीतियों को जारी रखा।
- भारतीय रिजर्व बैंक ने विश्व समुदाय को यह सूचित किया कि अमेरिका और अन्य यूरोपीय देशों के मुकाबले हमारी अर्थव्यवस्था की वृद्धि निर्यात बाजार पर ही आधारित नहीं है और आगे तेल आधारित अर्थव्यवस्थाओं की वर्तमान तेजी निर्यात को सहायता प्रदान करेगी।
- भारतीय रिजर्व बैंक ने बताया कि शेयर बाजार से होने वाला लाभ–हानि काल्पनिक व अल्पकालिक उतार–चढ़ाव वाला है।
- साथ ही इस परिप्रेक्ष्य में यह भी उल्लेख किया जाना चाहिए कि हमारी कुल जनसंख्या का केवल 2 प्रतिशत भाग ही शेयर बाजार से जुडा है।
- मंदी के बावजूद विश्व बैंक ने यह अनुमान लगाया कि विकासशील देशों के मध्य धन प्रेषण की प्राप्तियों के मामले में भारत, चीन और मैक्सिको चोटी के तीन देशों में अपना स्थान बरकरार रखे हैं।

यद्यपि भारतीय अर्थव्यवस्था पर मंदी का असर प्रत्यक्ष रूप से अधिक नहीं पडा, लेकिन फिर भी वैश्वीकरण की दिशा में उत्तरोत्तर बढ़ने के कारण मंदी के दौर में भारत के आयात–निर्यात, औद्योगिक उत्पादन, रोजगार सृजन, आईटी उद्योग आदि महत्वपूर्णं क्षेत्र प्रभावित रहे।

भारत का सबसे ज्यादा प्रभावित होने वाला क्षेत्र सूचना–तकनीकी क्षेत्र रहा। आईटी क्षेत्र का अधिकांश निर्यात अमेरिका को होने के कारण इस क्षेत्र के निर्यात में कमी हुई। इस कारण एक तरफ जहां आईटी सेक्टर में रोजगार में कमी हुई वहीं दूसरी तरफ भारत का भुगतान संतुलन पर विपरीत प्रभाव पडा।

वैश्विक मंदी का दूसरा तत्कालिक प्रभाव हमारे शेयर बाजार पर पड़ना स्वाभाविक था। क्योंकि आज लगभग सभी देश की वित्तीय संस्थाएं व सरकारें दूसरे देश के शेयर बाजारों में निवेशक है। इस सबप्राइम संकट से भारत का विदेश व्यापार भी प्रभावित हुआ।

वर्ष 2008 के पश्चात् भारत के आयात–निर्यात में काफी कमी हुई। आयात की अपेक्षा निर्यात में अधिक कमी हुई। लेकिन आज हमारी अर्थव्यवस्था मंदी से उबर कर विकास की ओर अग्रसर है। मंदी के कारण उपजी कठिनाइयों को दरकिनार करते हुए हमारे विदेशी व्यापार में वृद्धि हुयी है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेशकर्ताओं को, विश्व की अन्य अर्थव्यवस्थाओं से भारतीय अर्थव्यवस्था पुनः निवेश योग्य, अधिक सुरक्षित व विश्वसनीय लग रही है। संवेदी सूचकांक फिर 16000 से ऊपर निकल चुका है। हमारे आईटी उद्योग एवं अन्य वित्तीय संस्थाओं में रोजगार के नये अवसर उत्पन्न हो रहे हैं।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि वैश्विक मंदी का असर भारतीय अर्थव्यवस्था पर अवश्य पड़ा, लेकिन यहां पर मंदी का असर अन्य देशों के मुकाबले कम रहा। जिसका लाभ हमें विकास के सूचकों के माध्यम से आने वाले समय में अवश्य दिखायी देगा। ❑

(लेखक रामा डिग्री कालेज, लखनऊ में वाणिज्य विभाग में प्रवक्ता हैं।)

क्या लुप्त हो जाएगी गंगा

गंगा के यदि हम धार्मिक महत्व को छोड़ दें, तो भी गंगोत्री से लेकर गंगासागर तक इसके किनारे बसी हुई तीस करोड़ से अधिक आबादी और तमाम जीव–जंतुओं, वनस्पतियों के जीवन का मूल आधार गंगा ही हैं। गंगा के बिना गंगा की घाटी में जीवन संभव नहीं है, इसलिए इसकी रक्षा, इसे निर्मल बनाए रखने की चिंता और प्रयास जो नहीं करता है, वह अपने साथ ही आत्मघात कर रहा है।

■ निरंकार सिंह

गंगा और यमुना कोई साधारण नदियां नही हैं। सदियों से यह हिंदुओं की आस्था का केंद्र रही हैं। पर आज इन नदियों का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। पिछले 56 वर्षों में गंगा के पानी में बीस फीसदी की कमी आई है। आगामी दशकों में इस कमी के बढ़ने की पूरी संभावना है। यही हाल रहा तो अगले 50 सालों में गंगा नदी सूख जाएगी। यह निष्कर्ष नदियों के आकार प्रकार पर शोध करने वाले विशेषज्ञों के एक दल ने निकाला है। इस प्रमुख नदी की 27 धाराओं में से अब तक 11 धाराएं विलुप्त हो चुकी हैं और 11 धाराओं में जलस्तर में तेजी से कमी आ रही है। पर्यावरण की दृष्टि से यह स्थिति भयावह है। इसका कारण गंगोत्री ग्लेशियर का तेजी से पिघलना बताया गया है।

गंगा के यदि हम धार्मिक महत्व को छोड़ दें, तो भी गंगोत्री से लेकर गंगासागर तक इसके किनारे बसी हुई तीस करोड़ से अधिक आबादी और तमाम जीव–जंतुओं, वनस्पतियों के जीवन का मूल आधार गंगा ही हैं। गंगा के बिना गंगा की घाटी में जीवन संभव नहीं है, इसलिए इसकी रक्षा, इसे निर्मल बनाए रखने की चिंता और प्रयास जो नहीं करता है, वह अपने साथ ही आत्मघात कर रहा है। वेदों से लेकर वेदव्यास तक, वाल्मीकि से लेकर आधुनिक कवियों और साहित्यकारों ने इसका

गंगा और यमुना कोई साधारण नदियां नही हैं। सदियों से यह हिंदुओं की आस्था का केंद्र रही हैं। पर आज इन नदियों का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। पिछले 56 वर्षों में गंगा के पानी में बीस फीसदी की कमी आई है। आगामी दशकों में इस कमी के बढ़ने की पूरी संभावना है। यही हाल रहा तो अगले 50 सालों में गंगा नदी सूख जाएगी। यह निष्कर्ष नदियों के आकार प्रकार पर शोध करने वाले विशेषज्ञों के एक दल ने निकाला है।

गुणगान किया है। इसका भौगोलिक, पौराणिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और साथ–साथ आध्यात्मिक महत्व है। गंगा को शास्त्रों ने एक स्थावर, सुगम नित्य तीर्थ कहा है। वेदों और पुराणों में गंगा को बारंबार तीर्थमयी कहा गया है। महाभारत में कहा गया है कि गंगा अपना नाम उच्चारण करने वाले के पापों का नाश करती है, दर्शन करने वाले का कल्याण करती है तथा थन–पान करने वाले की सात पीढ़ियों तक पवित्र करती हैं। यह वारि–प्रवाह आकाश से पृथ्वी पर यों ही नहीं आया। इसके लिए भगीरथ ने बहुत तप किया था। भगीरथ की जिस गंगा में कभी निर्मल जल की धारा बहती थी, आज वहां सड़ांध और दुर्गंध के भभके उठते रहते

हैं। कानपुर में तो इस नदी ने एक तरह से नाले का रूप ले लिया है और वह अपने स्थान से भी खिसक रही है। अपनी नदियों को प्रदूषण से बचाना हमारा कर्तव्य है। पर गंगा और यमुना जैसी पावन नदियों को भी प्रदूषण से मुक्त कराने की चिंता अब शायद सरकार को नहीं है, इसीलिए इसके लिए अदालतों को बार–बार पहल करनी पड़ती है। सरकार यदि इन पावन नदियों की साफ–सफाई भी नहीं कर सकती है, तो फिर उसके होने न होने से क्या फर्क पड़ता है। जब तक योजनाओं और घोषणाओं को पूरी इच्छा शक्ति से लागू नहीं किया जाएगा और लोगों को जागरूक नहीं किया जाएगा, तब तक हम गंगा–यमुना जैसी अपनी जीवनदायी नदियों को नहीं बचा सकते हैं। गंगोत्री के गोमुख से निकलने के बाद गंगा नदी ने 27 धाराओं (उपनदियों) को जन्म दिया जो विभिन्न स्थानों पर अलग–अलग नामों से जानी जाती है। गंगा की धाराओं में 11 धाराएं–रूद्र गंगा, खांडव गंगा, नवग्राम गंगा, शीर्ष गंगा, कोटगंगा, हेमवंती गंगा, शुद्ध तरंगणी गंगा, धेनु गंगा, सोम गंगा और दुग्ध गंगा विलुप्त हो चुकी हैं। गणेश गंगा, गरूण गंगा और हेम गंगा की धारा सूख गई है। विश्व की विभिन्न रूप रचनाओं में जो सारस्वत एवं सर्वनिष्ठ सत्ता निवास करती है, उसी एक की गति चेतना को गंगा कहा जाता है–जगत्प्रवाहे बहुरूपभिन्न यदेकरूपं भवतीह गंगा। भारतीयों के हृदय में गंगा के प्रति इतनी श्रद्धा है कि वे सभी नदियों में गंगा का ही दर्शन करते हैं। जैसे तुलसी की घोषणा है कि जगत के सभी नर–नारी सियाराम मय हैं, वैसे ही मार्कण्डेय पुराण का कहना है कि सवा गंगारू समुद्रगारू अर्थात समुद्र से मिलने वाली सारी नदियां गंगा का ही

रूपांतर हैं। वैसे भी जल को जीवन का वायु के बाद दूसरा सबसे बड़ा आधार माना गया है। जल जीवन का पर्याय है। अतरू समस्त जीवन–धारा को प्रतीकात्मक रूप से गंगा–प्रवाह कहा जाता है। दुनिया की किसी नदी ने गंगा की भांति न तो मानवता को प्रभावित किया है और न भौतिक सभ्यता तथा सामाजिक नैतिकता पर इतना प्रभाव डाला है। जितने व्यक्तियों और जितने क्षेत्रों को गंगा के जल से लाभ

गंगा के बिना गंगा की घाटी में जीवन संभव नहीं है, इसलिए इसकी रक्षा, इसे निर्मल बनाए रखने की चिंता और प्रयास जो नहीं करता है, वह अपने साथ ही आत्मघात कर रहा है। वेदों से लेकर वेदव्यास तक, वाल्मीकि से लेकर आधुनिक कवियों और साहित्यकारों ने इसका गुणगान किया है।

मिलता है, उतना संसार की किसी और नदी से नहीं पहुंचता है। यह वस्तुतरू भारतीय संस्ऱति का मेरूदंड बन गई है। गंगा के प्रवाह के चढ़ाव–उतार ने अनेक साम्राज्यों के चढ़ाव–उतार को देखा है। हस्तिनापुर, कान्यकुब्ज, प्रतिष्ठान, पाटलिपुत्र, काशी, चंपा आदि इस तट पर बसे थे। भारत के जल व्यापार और नौ–शक्ति का प्रारंभ इसी की धाराओं से हुआ था। लगभग चार लाख वर्ग मील की भूमि इसके पानी से सींची और उर्वर बनाई जाती है। भारत की एक तिहाई आबादी इसी के तट पर बसती है। इसकी महिमा फाह्यान, ह्वेनसांग, इत्सिंग आदि विदेशियों ने और रसखान, रहीम, ताज, मीर आदि मुसलमानों ने भी गाई है। इन सारी बातों को छोड़ दें तो भी इसके अमृत के समान जल के कारण यह नदी भारत की जीवनदात्री है। वैज्ञानिक अनुसंधानों से भी यह सिद्ध हो गया है कि दुनिया की नदियों में गंगा ही सबसे पवित्रतम नदी है। इसके जल में कीटाणुओं के उन्मूलन की क्षमता सबसे अधिक है। शरीर के विभिन्न

गंगोत्री के गोमुख से निकलने के बाद गंगा नदी ने 27 धाराओं (उपनदियों) को जन्म दिया जो विभिन्न स्थानों पर अलग–अलग नामों से जानी जाती है। गंगा की धाराओं में 11 धाराएं–रूद्र गंगा, खांडव गंगा, नवग्राम गंगा, शीर्ष गंगा, कोटगंगा, हेमवंती गंगा, शुद्ध तरंगणी गंगा, धेनु गंगा, सोम गंगा और दुग्ध गंगा विलुप्त हो चुकी हैं। गणेश गंगा, गरूण गंगा और हेम गंगा की धारा सूख गई है।

अंगों के रोग इसके पवित्र जल से दूर हो जाते हैं। शुद्ध गंगाजल इस धरती पर एक दुर्लभ द्रव्य है। कुछ वर्ष पूर्व यूनेस्को के एक वैज्ञानिक दल ने हरिद्वार के निकट गंगा के पानी के अध्ययन के बाद कहा था कि जिस स्थान में पानी की धारा में मुर्दे, हड्डियां आदि दूषित वस्तुएं बह रही थीं, वहीं कुछ फुट नीचे का जल पूर्ण शुद्ध था। अनुसंधानों से यह भी पता चला है कि गंगा के जल में हैजे के कीटाणु तीन चार घंटे में स्वतरू मर जाते हैं। गंगाजल की पवित्रता अक्षुण्ण बनी रहे, इसीलिए शास्त्रों ने कहा है कि इसके तट पर मानव–वास नहीं होना चाहिए। गंगा के तट से सात किलोमीटर की जमीन को गंगा क्षेत्र कहते हैं। इस सीमा के भीतर रहने वाले को गंगा के जल और वायु से विशेष लाभ पहुंचता है। पद्म पुराण के अनुसार गंगा तट को मल, मूत्र, थूक आदि से दूषित करने वाला व्यक्ति पातकी होता है। अपनी नदियों और जल–स्रोतों को साफ–सुथरा रखने का कर्तव्य हर व्यक्ति का होना ही चाहिए। वैश्वीकरण की नीतियों को लागू किए जाने के बाद से भारत दुनिया के विकसित देशों का कूड़ाघर बनता जा रहा है। एक तरफ बहुराष्ट्रीय कंपनियां अपना कचरा यहां की नदियों में बहा रही हैं तो दूसरी तरफ भारत में विकसित देशों ने अपने औद्योगिक अपशिष्ट को बेचने की जो प्रक्रिया पिछले कई वर्षो से अपना रखी थी, उस पर भारत के उच्चतम न्यायालय ने जनहित में फैसला देते हुए 1997 में पूरी तरह रोक लगा दी थी, लेकिन इसके बावजूद पता नहीं किन अज्ञात संधियों और कूटनीतिक समझौतों के अंतर्गत यह अत्यंत विषैला कचरा लगातार अलग–अलग माध्मयों से भारत में निरंतर आता रहा है। उच्चतम न्यायालय की रोक के बावजूद यह सिलसिला जारी है। भारी मात्रा में शीशे के अलावा परमाणु रिएक्टरों तथा परमाणु बमों में नियंत्रक तत्व के रूप में प्रयोग की जाने वाली कैड्मियम धातु भी गंगाजल में बड़ी मात्रा में पाई जा रही है, लेकिन इसकी सफाई के लिए चलाई जा रही योजनाओं का अभी तक कोई नतीजा सामने नहीं आया है। इस चुनौती का मुकाबला किए बिना हमारा उद्धार गंगा नहीं कर सकती हैं। ❑

SHRI KRISHNA FOAM HOUSE

B-134, B-Main,
100 ft. Road, Jyoti Colony
Near- Durga Puri
Shahdra, Delhi-110 032

Prop: Pradeep Sharma

Mobile No.
9810521144

जान का दुश्मन बना इलेक्ट्रॉनिक कचरा

इस विषय में कोई योजना एवं नीति भी अभी तक नजर नहीं आ रही है जो इस इलेक्ट्रानिक कचरे से हमारे पर्यावरण तंत्र को बचा सके। महज सरकारी पहल ही पर्याप्त नहीं होगी, जब तक कि इस धीमे जहर के बारे में व्यापक जनचेतना जागृत नहीं होगी तब तक परिस्थितियों में बदलाव मुश्किल है। भय इस बात का है कि कहीं हमारी आंख खुलने तक हम इस इलेक्ट्रानिक कचरे में गर्दन तक ना डूबे हों।

■ **पंकज चतुर्वेदी**

आज के इस आधुनिक युग में जब संचार क्रांति के परिणाम परिलक्षित हो रहे हैं। ऐसे समय में यह ध्यान देना और सोचना भी बहुत आवश्यक है कि, क्या यह संचार क्रांति के अत्याधुनिक उपकरण कहीं मानव जीवन से खिलवाड़ तो नहीं कर रहे, कहीं ऐसा न हो कि आधुनिकता की दौड़ में भागते–भागते हमारा दम निकल जाए।

यह आलेख और इस के विचार आधुनिक संचार उपकरणों के विरोधी नहीं हैं, क्योंकि आज किसी का भी जीवन इनके बिना सहज नहीं है, लेकिन चिंता इस बात की भी होनी चाहिए कि कहीं यह सब आधुनिकता हमारे जीवन एवं पर्यावरण के लिए घातक तो नहीं? क्योंकि कहीं–कहीं ऐसा भी है कि संचार उपकरणों के द्वारा भेजे जाने वाले ई–मेल से कागज और अप्रत्यक्ष रूप से कुछ हद तक पेड़ बच रहे

हैं। यह इलेक्ट्रानिक उपकरण जिन पदार्थों से मिलकर निर्मित होते हैं, वह सब पर्यावरण के लिए बहुत ही घातक हैं। लगभग सारे ही इलेक्ट्रानिक उपकरण चाहे कम्प्यूटर, टीवी, मोबाईल–फोन, सी. डी.प्लेयर, फैक्स मशीन, फोटोकॉपियर और यहां तक कि माइक्रोवेव ओवन जिस प्रक्रिया और जिन पदार्थों से बनते हैं, वह पर्यावरण के लिए एक बड़ी चिंता का सबब है।

ई–वेस्ट मुख्यतः दो स्रोतों से आता है, जिनमें पहला इलेक्ट्रानिक कम्पोनेंट के निर्माण से है जैसे पी.सी.बी., अर्ध विद्युत चालक, संधारित्र, कैथोड–रे ट्यूब, पिक्चर ट्यूब, पी.वी.सी. या धातु की शीट आदि। दूसरा अनुपयोगी इलेक्ट्रानिक उपकरणों से छुटकारा पाने के दौरान । पहली स्थिति में निर्माण के दौरान प्रयोग में लाए गए विभिन्न रसायन अवयव, तो दूसरी स्थिति में अवैज्ञानिक तरीके से अनुपयोगी उपकरणों को नष्ट करने की प्रक्रिया से

आज के इस आधुनिक युग में जब संचार क्रांति के परिणाम परिलक्षित हो रहे हैं। ऐसे समय में यह ध्यान देना और सोचना भी बहुत आवश्यक है कि, क्या यह संचार क्रांति के अत्याधुनिक उपकरण कहीं मानव जीवन से खिलवाड़ तो नहीं कर रहे, कहीं ऐसा न हो कि आधुनिकता की दौड़ में भागते–भागते हमारा दम निकल जाए। यह विचार आधुनिक संचार उपकरणों के विरोधी नहीं हैं, क्योंकि आज किसी का भी जीवन इनके बिना सहज नहीं है, लेकिन चिंता इस बात की भी होनी चाहिए कि कहीं यह सब आधुनिकता हमारे जीवन एवं पर्यावरण के लिए घातक तो नहीं?

पर्यावरण प्रभावित हो रहा है। और इन दोनों स्थितियों की आज पूरे देश में बहुतायात है। चिंता इस बात की है कि किसी का भी ध्यान अभी इस और पूर्ण रूप से नहीं है और यह जहर धीरे–धीरे हमारे दूषित हो चुके पर्यावरण तंत्र को और प्रदूषित कर रहा है।

लगभग सभी इलेक्ट्रानिक कम्पोनेंट भारी धातुएं जैसे जिंक, कॉपर, कैडमियम, बोरियम, मर्करी, आर्सेनिक, जस्ता आदि को अपने अंदर समेटे रहते हैं, क्योंकि इन सब धातु के बिना यह सब निर्मित नहीं हो सकते। इनकी निर्माण प्रक्रिया के दौरान यह धातुएं विभिन्न प्रकार की घातक गैसों से भी संसर्ग करती हैं। परिणामतः उत्पन्न होने वाले घातक अवयव अनजाने ही हमारे शारीरिक तंत्र में प्रवेश कर जाते हैं और फेफड़ों, किडनी, केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र जैसे महत्वपूर्ण अंगों व तंत्रों को नुकसान पहुंचाते हैं। यही सब आनुवांशिक विकृति, दमे की बीमारी व कैंसर जैसे रोगों के जन्मदाता हैं। लेड धातु दिमाग एवं किडनी के लिए नुकसानदायक है, तो मर्करी दिल–दिमाग दोनों के लिए। वहीं क्रोमियम लीवर एवं त्वचा को नुकसान पहुंचाने के साथ कैंसर का भी कारण है। मानव के स्वास्थ को धीरे–धीरे प्रभावित करने के साथ ही यह सब विषैले रसायन और धातु पूरे जैविक–तंत्र को नुकसान पहुंचा रहे हैं। शीघ्र ही इस दिशा में कोई सशक्त कदम नहीं उठाए गए तो यह धीमा जहर धीरे–धीरे इस पृथ्वी पर पूरी मानव सभ्यता को ही लील जाएगा।

इसके साथ ही अप्रचलित हो चुके इलेक्ट्रानिक उपकरणों से क्या निकाला जा सकता है, भारत में यह भी एक बड़ा उद्योग है। अनाधिकृत एवं अप्रशिक्षित छोटी–छोटी तमाम इकाई देश भर में इस तरह के कार्य कर रही हैं। हमारे देश में सस्ती मात्रा में उपलब्ध श्रम संसाधन ऐसे अवैध उद्योग को बढ़ावा दे रहे हैं । एक आंकलन के मुताबिक भारत में लगभग 20 लाख अप्रचलित कम्प्यूटर उपकरण है तो दुनिया भर में यह आंकड़ा 3 करोड़ 15 लाख के लगभग है। जिसके कम्पोनेंट में सोना, चांदी, तांबा, प्लेटिनम आदि कीमती धातुएं सरलता से उपलब्ध हो जाती हैं। आपके लिए जो मशीन बेकार है, कोई उसमें अपना हित साध रहा है, बगैर यह सोचे–समझे कि यह उसके और उसके पूरे समाज के मानवीय एवं पर्यावरणीय तंत्र के लिए घातक हैं । इस कोढ़ में खाज का काम अमेरिका और खाड़ी के देशों से दान में मिलते इलेक्ट्रानिक उपकरण हैं जो शीघ्र ही तकनीक रूप से अप्रचलित होकर कबाड़ में शामिल हो जाते हैं। औसतनः एक अप्रचलित कम्प्यूटर लगभग पौने दो किलो जस्ता, 2.8 ग्राम कैडमियम व 0.57 ग्राम मर्करी को समेटे रहता है। और जब इस अप्रचलित कम्प्यूटर को विघटित किया जाता है तो अंदाजा लगाया जा सकता है कि यह विघटन कितना हानिकारक होता है।

ई–वेस्ट मुख्यतः दो स्रोतों से आता है, जिनमें पहला इलेक्ट्रानिक कम्पोनेंट के निर्माण से है जैसे पी.सी.बी., अर्ध विद्युत चालक, संधारित्र, कैथोड–रे ट्यूब, पिक्चर ट्यूब, पी.वी.सी. या धातु की शीट आदि। दूसरा अनुपयोगी इलेक्ट्रानिक उपकरणों से छुटकारा पाने के दौरान ।

देश में ऐसे अवैध विघटन को रोकने के तमाम कानून हैं, पर वे सब खुद अपनी दशा पर ही रो रहे हैं। फैक्ट्री अधिनियम–1948, ''पब्लिक लायबलिटी इंश्योरेंस अधिनियम–1991'', हेजर्ड वेस्ट मेनेजमेंट नियम–2003, जैसे तमाम कानून इन अवैध कारोबारियों के आगे पस्त एवं परास्त हैं। इस मामले में यूरोपीय देश भारत की तुलना में थोड़े सख्त हैं और एशियाई देशों में जापान, दक्षिण कोरिया व ताईवान जैसे देश भी इस मामले में सतर्क हैं। यूरोपीय देशों ने तो 1 जनवरी 2007 से इलेक्ट्रानिक उपकरणों के निर्माण के दौरान "लैड" के उपयोग पर पाबंदी लगा दी है और एशियाई देशों में सिर्फ जापान ने इसका अनुसरण किया है। यह सब देश इस दिशा में भी प्रयासरत हैं कि निर्माताओं पर यह दबाव बनाया जावे कि निर्माण प्रक्रिया में उपयोग होने वाले पदार्थ ऐसे हों जो रि–साइकिल किये जा सकें। कहीं–कहीं तो निर्माणकर्ताओं का ही यह उत्तरदायित्व यह है कि अनुपयोगी उपकरणों को ठीक ढंग से विघटित करें।

यह सब देश जागृत हैं और हम भारत में तापमान के लगभग 48 डिग्री पहुंचने के बाद भी सो रहे हैं। ना तो हमें इससे होने वाले नुकसान का ज्ञान है और ना ही यह भान है कि यह आने वाले समय में मानव सभ्यता के लिए कितना घातक होगा। इस विषय में कोई योजना एवं नीति भी अभी तक नजर नहीं आ रही है जो इस इलेक्ट्रानिक कचरे से हमारे पर्यावरण तंत्र को बचा सके। महज सरकारी पहल ही पर्याप्त नहीं होगी, जब तक कि इस धीमे जहर के बारे में व्यापक जनचेतना जागृत नहीं होगी तब तक परिस्थितियों में बदलाव मुश्किल है। भय इस बात का है कि कहीं हमारी आंख खुलने तक हम इस इलेक्ट्रानिक कचरे में गर्दन तक ना डूबे हों। ❑

जरूरत है आम आदमी को जागरूक होना

भारत को आध्यात्मिक दृष्टि से विश्व गुरु की भूमिका दिलाने वाले स्वामी विवेकानंद का जीवन अनुकरणीय है। जिनका पूरा जीवन अभावों में बीता परंतु इसके बावजूद उन्होंने आत्मनिर्भरता, स्वाबलंबन का साथ नहीं छोड़ा। अविश्वास तथा असुरक्षा को अपने पास तक नहीं आने दिया। क्या आज का शिक्षित आधुनिक युवा उन जैसी कठिनाईयों का सामना करके अपने कर्तव्यों का पालन कर सकता है?

■ डॉ. दीपक श्रीवास्तव

हाल के कुछ महीनों में ढोंगी साधु–संतों के कारनामों ने आम श्रद्धालु भारतीय की भावनाओं को आहट किया है। अध्यात्म का केंद्र माने जाने वाले देश में ही आज अध्यात्म के नाम पर हुये अनैतिक कार्यों के कारण लोग अपने को ठगा महसूस कर रहे हैं।

उदारीकरण का प्रभाव भारतीय अध्यात्म पर भी पड़ा है जहां प्राचीन काल में साधु–संन्यासी गुफाओं तथा पर्वताओं पर ध्यान में लीन होकर ज्ञान की खोज करते थे। वहीं वर्तमान में साधु संत बड़े–बड़े ट्रस्टों के मालिक होकर आधुनिक जीवनशैली को अपनाये हुए हैं। टी.वी. चैनलों तथा समाचार पत्रों के माध्यम से बड़े–बड़े विज्ञापन देकर अपने आपको महिमा मंडित करने में लगे हुये हैं। जहां नगरों में इनके शिविरों तथा प्रवचन के प्रचार–प्रसार में अच्छा खासा व्यय किया जाता है। इनके आश्रम सैकड़ों हेक्टेयर जमीन में फैले होते हैं। इस सबके लिये इनके पास धन कहां से आता है?

भारतवर्ष के कुछ साधु–संन्यासी इस श्रेणी में नहीं आते हैं। आज भी हजारों साधु–संन्यासी सनातन अध्यात्म की परंपरा का निर्वहन कर रहे हैं। उनका भौतिक जगत से नाता बहुत कम रहा है। अध्यात्म के बाजारीकरण के लिये दोषी

उदारीकरण का प्रभाव भारतीय अध्यात्म पर भी पड़ा है जहां प्राचीन काल में साधु–संन्यासी गुफाओं तथा पर्वताअें पर ध्यान में लीन होकर ज्ञान की खोज करते थे। वहीं वर्तमान में साधु संत बड़े–बड़े ट्रस्टों के मालिक होकर आधुनिक जीवनशैली को अपनाये हुए हैं। टी.वी. चैनलों तथा समाचार पत्रों के माध्यम से बड़े–बड़े विज्ञापन देकर अपने आपको महिमा मंडित करने में लगे हुये हैं।

वे छद्म साधु–संन्यासी हैं जिन्होंने अध्यात्म को पेशा बनाकर अपना साम्राज्य खड़ा किया है।

इसी प्रकार ज्योतिष जो कि प्रमुख प्राध्य भारतीय विद्या है, का सर्वाधिक दुरुपयोग देखने को मिल रहा है। तथाकथित ज्योतिषी बड़े–बड़े विज्ञापनों के माध्यम से मानव जीवन की किसी भी समस्या का 24 घंटे में निदान करने का झूठा दावा करते हैं। इनका धंधा समाज में अनावश्यक डर पैदा करके लूट–खसोट करना है। शहरों में आम ज्योतिषी 1000 से लेकर 3000 तक परामर्श शुल्क लेता है तथा इनके नेटवर्क में पुजारियों से लेकर नग–रत्न बेचने वाले तक शामिल होते हैं। बड़ी–बड़ी पूजा विधि तथा महंगे रत्नों के

माध्यम से अच्छी कमाई की जाती है।

शायद इस बाजारीकरण के पीछे भारतीय समाज विशेषकर मध्यम वर्गीय में आये सामाजिक बदलाव है। प्राचीन काल में भारतीय समाज का आधार 'कर्म' हुआ करता था तथा समाज का वर्गीकरण व्यक्ति के कर्मों के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र में होता था। पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से भारत के वर्तमान सामाजिक वर्गीकरण का आधार 'अर्थ' हो गया है तथा व्यक्ति विशेष की आर्थिक स्थिति के आधार पर भारतीय समाज उच्च वर्ग, मध्य वर्ग तथा निम्न वर्ग में बांटा जाता है।

उदारीकरण तथा भूमंडलीकरण ने भारतीय समाज में सकल परिवार व्यवस्था तथा अनावश्यक महत्वाकांक्षाओं को जन्म दिया है। हालांकि इसका सकारात्मक प्रभाव समाज में आयी प्रतिस्पर्धा की भावना है। प्रतिस्पर्धा एक सीमा तक ही सकारात्मक हो सकती है। अनावश्यक महत्वाकांक्षाओं के कारण असुरक्षा का भाव पैदा होता है।

पुराने समय में संयुक्त परिवारों के चलते समाज में समर्पण तथा सहनशीलता का भाव रहता था। लोगों की अपेक्षाएं कम हुआ करती थी।

वर्तमान में रिश्तों का आधार व्यक्तिगत होता जा रहा है तथा मर्यादाएं समाप्त हो रही है। ऐसे भी उदाहरण पाये जाते हैं कि पति–पत्नी वैवाहिक जीवन कानूनी अनुबंध के आधार पर जीते हैं। यदि दोनों में से कोई भी संबंध समाप्त करना चाहता है तो उसे अनुबंध के आधार पर मोटी रकम दूसरे को देनी होती है। निःसंदेह यह अविश्वास एवं असुरक्षा की पराकाष्ठा है।

इसी असुरक्षा एवं अविश्वास के कारण तनावग्रस्त होकर लोग शांति की खोज में ढोंगी साधु–संन्यासियों, ज्योतिषीयों के चंगुल में फंसते हैं।

कालांतर में भारतीय समाज अंधविश्वास में जकड़ा था जिसके कारण गरीबी तथा अशिक्षा थी। अंधविश्वास के विरुद्ध भारतीय मीडिया ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अंधविश्वासों तथा उसके प्रथमदाताओं का भंडाफोड़ मीडिया के द्वारा किया गया।

इसी प्रकार आज मीडिया को आध्यात्मिक बाजारीकरण को रोकना होगा। ताकि ढोंगी साधु–संत और ज्योतिषयों की वास्तविकता को आम आदमी तक पहुंचाना होगा।

हमें बचपन में सिखाया जाता था बड़ों का आदर करो, ईश्वर पर विश्वास रखो, पैसा कमाना सीखो और गरीब और लाचार लोगों की मदद करो। लेकिन ढोंगी संतों ने बच्चों के मन में साधु की वर्तमान छवि ही बिगड़ दी है।

हम भाग्यशाली है कि हमें आध्यात्मिक विरासत मिली है। अध्यात्म का संबंध आत्मिक ध्यान अर्थात् अपने आत्मस्वरूप को पहचानने से है। इसके लिये आवश्यक है कि असुरक्षा तथा अविश्वास से परे होना। जिसने भी आत्मिक ज्ञान पाया अथवा पाने की चेष्टा की उसका बाह्य जगत और भौतिक वस्तुओं से कोई संबंध नहीं रहता है।

भारत को आध्यात्मिक दृष्टि से विश्व गुरु की भूमिका दिलाने वाले स्वामी विवेकानंद का जीवन अनुकरणीय है। जिनका पूरा जीवन अभावों में बीता परंतु इसके बावजूद उन्होंने आत्मनिर्भरता, स्वाबलंबन का साथ नहीं छोड़ा। अविश्वास तथा असुरक्षा को अपने पास तक नहीं आने दिया।

क्या आज का शिक्षित आधुनिक युवा उन जैसी कठिनाईयों का सामना करके अपने कर्तव्यों का पालन कर सकता है?

संक्षेप में अध्यात्म के नाम पर होने वाली ठगी को रोकने में मीडिया के सहयोग के साथ–साथ सामाजिक प्राथमिकताओं में बदलाव की आवश्यकता है। ❑

महाबोलनिश मॉडल के कारण देश खोखला हुआ : अरुण ओझा

बीते माह स्वदेशी जागरण मंच जमशेदपुर इकाई द्वारा एक दिवसीय कार्यकर्ता सम्मेलन को संबोधित करते हुए स्वदेशी जागरण मंच के राष्ट्रीय संयोजक अरुण ओझा ने कहा कि भारत सोने की चिड़िया था। भारत के बच्चे एक समय में हीरे के अण्डे से खेला करते थे, पर अब शीशे के अण्डे का मिलना भी मुमकीन नहीं है। सैकड़ों वर्षों की गुलामी के बाद जब भारत आजाद हुआ तो देश के विकास का मॉडल का आधार गाँधी का हिन्द स्वराज नहीं बना, बल्कि नेहरू ने महाबोलनिश मॉडल के आधार पर विकास की नींव रखी। परिणामतः 1991 आते–आते देश खोखला हो गया और समाजवादी ढ़ाचे से सीधे छलांग लगाकर विकास के लिए पूंजीवाद रास्ते तलाशने पड़े। एक गलती से निकलकर हम दूसरी गलती की ओर निकले। स्वदेशी जागरण मंच ने आशंका जाहिर की थी।

इन व्यवस्था में बेरोजगारी, किसानों की बदहाली, अमीरी–गरीबी की खाई बढ़ेगी साथ ही देश के कुटीर लघु और मध्यम उद्योग धीरे–धीरे चौपट होंगे आज वह आशंका बिल्कुल सही साबित हुई है।

श्री अरुण ओझा ने कहा कि भारतीय चिंतन के अनुरूप प्रकृति के साथ समन्वय बनाते हुए ही विकास के रास्ते ढूढ़ने होंगे, जिसमें पर्यावरण का संरक्षण होगा, मानव मूल्य और परिवार संस्था इसके आधार होंगे।

कार्यक्रम के उद्‌घाटन सत्र में बंदे शंकर सिंह, सचिन्द्र बरियार, डॉ. के.के. शर्मा इत्यादि ने भी अपने विचार रखे।

भारत सोने की चिड़िया था। भारत के बच्चे एक समय में हीरे के अण्डे से खेला करते थे, पर अब शीशे के अण्डे का मिलना भी मुमकीन नहीं है। सैकड़ों वर्षों की गुलामी के बाद जब भारत आजाद हुआ तो देश के विकास का मॉडल का आधार गाँधी का हिन्द स्वराज नहीं बना, बल्कि नेहरू ने महाबोलनिश मॉडल के आधार पर विकास की नींव रखी।

सम्मेलन के दूसरे सत्र में राष्ट्रीय परिषद् के सदस्य मनोज कुमार सिंह ने एक प्रस्ताव रखा। इस प्रताव में जमशेदपुर एवं इसके आसपास के जल पर्यावरण की बिगड़ी स्थिति पर चिंता व्यक्त की गई और इसके समाधान के लिए आम लोगों को संकल्पित होने का आग्रह किया गया।

प्रस्ताव सत्र में मुरलीधर केडिया, प्रो. स्नेहलता सिन्हा, आर.सी. पाठक, जवाहरलाल शर्मा, भवानी विनायक इत्यादि ने अपने संसोधन प्रस्तुत किए तथा सत्र की अध्यक्षता टाटा वर्कर्स यूनियन के उपाध्यक्ष सुबोध श्रीवास्तव ने की।

अंतिम सत्र में आगामी योजनाओं की रूप रेख बनी तथ गौरव शंकर, पंकज कुमार सिंह, राजपति देवी, अनिल तिवारी, सुश्रय कुमार इत्यादि पर कुछ संगठनात्मक जिम्मेदारियां प्रदान की गई।

सम्मेलन को सफल बनाने में अनिल राय, राजकुमार साह, रमेश्वर प्रसाद, गुरजीत, कौशल शर्मा, संक्रीत प्रमाणिक, पंकज कुमार सिंह इत्यादि अन्य कार्यकर्ताओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। ❑